एम.ए.एच.आई. -03

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम.ए. पाठ्यक्रम

(इतिहास)

एम.ए.एच.आई. -03- आधुनिक विश्व का इतिहास - 4
(युद्ध एवं औद्योगिक समाज-1917-1945)

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम.ए. पाठ्यक्रम
(इतिहास)

खण्ड-4

इकाई संख्या

इकाई 16	
सामाजिक असन्तोष एवं मजदूर विद्रोह	5–14
इकाई 17	
संयुक्त राज्य अमेरिका की अर्थव्यवस्था की सफलता एवं असफलता : रुजवैल्ट की न्यू डील नीति	15–40
इकाई 18	
चतुर्थ विश्व की अर्थव्यवस्था-सुदूर पूर्व में जापान का उत्कर्ष	41–52
इकाई 19	
अंतर्राष्ट्रीय कोमिंटर्न पैक्ट तथा सोवियत विदेश नीति	53–65
इकाई 20	
फासिस्ट राज्य	66–78

पाठ्यक्रम विकास समिति

प्रो. बी.एस. शर्मा,
कुलपति (अध्यक्ष)

प्रो. रविन्द्र कुमार
निदेशक, नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं पुस्तकालय, नई दिल्ली

प्रो. बी.आर. ग्रोवर
पूर्व निदेशक, भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रो. एस.पी. गुप्ता
इतिहास विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

प्रो. जे.पी. मिश्रा
पूर्व इतिहास विभागाध्यक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रो. के.एस. गुप्ता
पूर्व विभागाध्यक्ष, मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

डा. बी.के. शर्मा
इतिहास विभाग कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डा. श्रीमती कमलेश शर्मा
इतिहास विभाग, कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डा. याकूब अली खान
इतिहास विभाग कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम निर्माण दल

डॉ. आर.के. बारीक
नई दिल्ली

डॉ.अमीनुद्दीन
पूर्व विभागाध्यक्ष, डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर

डॉ. जिगर मोहम्मद
इतिहास विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

प्रो. मंसूरा हैदर
इतिहास विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम वि.वि., अलीगढ़

डॉ. डी.एन. असोपा
निदेशक, क्षेत्रीय केन्द्र,इ.गां.रा.मु. वि.वि.,जयपुर

पाठ्यक्रम प्रभारी एवं सम्पादक

डॉ. बृजकिशोर शर्मा
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रो.(डॉ.)बी.के. शर्मा**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक(**अकादमिक**)	प्रभारी अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन -Oct 2012 MAHI-03/ISBN No.-13/978-81-8496-262-8

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

इकाई-16

सामाजिक असन्तोष और मजदूर विद्रोह

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 मजदूर वर्ग की राजनीति

16.3 पूंजीवादी देशों में आर्थिक संकट

16.4 फासिस्ट राज्यों का उदय एवं मजदूर आन्दोलन

16.5 मजदूरों के प्रति राज्य का दृष्टिकोण

16.6 मजदूरों का मुख्य उद्देश्य

16.7 राष्ट्रीय आन्दोलन और मजदूर

16.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

16.0 उद्देश्य

इस इकाई से हमारा उद्देश्य आपको यह अवगत कराना है कि 1917 की रूसी क्रान्ति के बाद मजदूर एकजुट होकर किस प्रकार अपने हितो, अधिकारों हेतु लड़े। प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद साम्राज्यवादियों, पूंजीगितयों ने मिलकर मजदूरों का शोषण करना शुरू किया। मजदूरों ने अपने अधिकारों, हितों की सुरक्षा हेतु अपने स्वयं के संगठन बनायें। इन मजदूर आन्दोलनों को राष्ट्रीय आन्दोलनों के नेताओं का समर्थन भी प्राप्त था। इन आन्दोलनों नें विश्व इतिहास को कई प्रकार से प्रभावित किया।

16.1 प्रस्तावना

युद्धोत्तर औद्योगिक समाज की विभिन्न इकाइयों की राजनीतिक व्याख्या करने से पूर्व प्रत्येक को युद्धकालीन मजदूर समाज की कतिपय गतिविधियों का तुलनात्मक अध्ययन करना पड़ता है। साम्राज्यवादियों के आपसी झगडो के कारण विश्व युद्ध हुआ। युद्ध ने उग्र राष्ट्रवाद का मनोविज्ञान उत्पन्न किया जिसने मजदूर वर्ग को उसके अनुसार चलने के लिये मजबूर कर दिया। राष्ट्र और राष्ट्रीयता के नाम पर त्याग करने हेतु मजदूरों को उत्साहित किया गया। यह एक कटु सत्य है कि मजदूरों की एक शाखा ने खुलकर उग्रवादी राष्ट्रीयता की धारा में बहना शुरू कर दिया। इन्हें उग्र समाजवादियों के नाम से जाना जाने लगा।

मजदूर-समाज के एक प्रभावी वर्ग ने इस नई लहर से सम्बन्धित प्रश्न खड़ा किया। उन्होंनें अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से राजनीति में झांका। सभी देशों के मजदूर शोषण तथा राष्ट्रीय गुलामवृत्ति के शिकार बन जाते है। इस प्रकार के शोषण से मुक्ति हेतु उन्हें आपस में एक होना ही पड़ेगा।

विश्व युद्ध के बीच में एक महत्वपूर्ण घटना घटित हुई जो रूस की क्रांति के नाम से जानी जाती है जिसने सम्पूर्ण विश्व का ध्यान आकर्षित किया । बुनियादी रूप से तो यह एक

मजदूर वर्ग का ही विद्रोह था जिसने पूंजीपति राज्यों का खात्मा कर दिया । मजदूरों की क्रांति एक सर्वहारा के राज्य की स्थापना करने में सफल रही।

युद्धोत्तर इतिहास का निर्माण केवल एक महत्वपूर्ण घटना से जाना जाता है जिसे रूस की क्रान्ति कें नाम से जाना जाता है । क्रांति ने पूंजीपति देशों के मजदूरों को मजबूर किया कि वो अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करें । इसने मजदूरों के उस वर्ग में सम्बन्ध प्रदान किया जो अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संगठन की राजनीति में विश्वास करने थे । सबसे बड़ी बात तो यह थी कि रूसी क्रांति के नेता लेनिन में विश्व मजदूर राजनीति का मार्गदर्शन हेतु एक 'कम्यूनिस्ट अन्तर्राष्ट्रवाद' की स्थापना कर दी । तृतीय अन्तर्राष्ट्रीयता का अस्तित्व सन 1920 में हुआ । थर्ड इन्टरनेशनल ने सेकण्ड इंटरनेशनल की अवहेलना की । यह राष्ट्रीय समाजवाद और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के मध्य डगमगाने लगी थी । युद्धोत्तर मजदूर वर्ग की राजनीति इन दोनों लहरों के मध्य का सम्वाद बन गई । मजदूर दल की राजनीति को नैतिक सम्बल प्राप्त हुआ । मजदूर इतिहास में (1919-1923) की अवधि एक क्रांतिकारी काल माना जाता है ।

16.2 मजदूर वर्ग की राजनीति

मजदूर वर्ग की राजनीति अब आदर्शवाद की ओर अग्रसर होने लगी । अब मजदूर वर्ग की राजनीति को चलाने के लिये मार्क्सवाद और लेनिनवाद एक आदर्शवादी सिद्धान्त बन गये । एक जबरदस्त हड़ताली आन्दोलन फ्रान्स, ब्रिटेन, इटली और संयुक्तराष्ट्र अमेरिका में गतिमान था । १०० लाख आदमियों को लपेटता एक चावल दंगा जापान में फूट पड़ा । अब चारों तरफ मजदूर मांग करने लगे कि (1) आठ घण्टे काम (2) तनख्वाह में अभिवृद्धि (3) मजदूरों की व्यापारिक संस्थाओं को मान्यता (4) और प्रजातांत्रिक स्वतंत्रता । मजदूरों की आर्थिक मांगों के संघर्ष में युद्ध से तबाह हुए किसान के झमेलों को प्राय: बीच में लाकर खड़ा कर दिया जाता था । परिणामत: अनेक राज्यों में उन्हें मजदूरी का सहयोग प्राप्त हुआ और वहां वे वोट का अधिकार, कम से कम घण्टे और उच्च पगार प्राप्ति के अधिकार लेने में सफल भी रहे ।

सन् 1919 में ब्रिटेन में मजदूर आन्दोलन हुआ जो रूस के समाजवादी सिद्धान्त के अनुकूल ही था । क्रांतिकारियों का प्रायवाद करने वाली फ्रान्सीसी जलसेना ने रूस के खिलाफ काम करने से इन्कार कर दिया । वस्तुत: हुआ यह कि फ़ान्सीसियों ने तो उल्टा रूस की धरती पर रूसी मजदूरों को सहारा दिया । अप्रैल 1919 में उन्होंने युद्धपोतों पर लाल झंडे लहरा दिए और रूसी मजदूरों के आन्दोलन में सम्मिलित हो गये । सारे यूरोप का मजदूर समाज व्यापारिक राजनीतिक संगठन के अन्तर्गत आ गया । वे लोग क्रांतिकारी मजदूर संगठनों के सदस्य भी बन गयें । 1921 में समाजवादी दलों कें 80 लाख सदस्य थे । जबकि व्यापारिक संस्थाएं मजदूर संगठन के करीब-करीब 220 लाख सदस्य थे ।

1923 में संयुक्त संघर्ष द्वारा मजदूर संगठनों ने किसानों की मदद से बुलगारिया में अधिकारतंत्री राज्य तंत्र को तोड़ने में सफल हुए । पौलन्ड के लेन्दीओर्ड की । पूंजीवादी व्यवस्था की 1923 की सर्दियों में नीवें हिला दी ।

हड़ताली आन्दोलन में अप्रत्याशित विकास हुआ । प्राय: आन्दोलन राजनीतिक रूप ग्रहण कर लेता और इसके साथ गलियों में नारेबाजी होती थी और पुलिस के साथ मुठभेड़ भी होती थी

अपर साइलेसिया बहु मुखी हड़ताली आन्दोलन का एक केन्द्र था । साइलेसिया के दुकानदार कारिन्दों ने एक इक्कीस सदस्यीय कांग्रेस समिति का चुनाव किया । इसमें कम्यूनिस्ट्स समाजवादी और व्यापार संघ के लोग शामिल थे । समीति द्वारा आयोजित एक आम हड़ताल का आयोजन 15 अक्टूबर को ऊपरी साइलेसिया में किया गया । इसमें खान के मजदूरों, धातु कर्मचारियों, रेल्वेकर्मचारी, डाक कर्मचारियों, नगरपरिषद कर्मचारियों और ऐसे ही और लोगों ने भी भाग लिया । 1923 के बसन्त और गर्मी के महीनों में एक विशाल मजदूर वर्गी आन्दोलन जर्मनी में हुआ जो अधिनायकवादी बुराई के खिलाफ आयोजित किया गया था । जुलाई 29 को आम हड़ताल रही और अधिनायकवाद के विरुद्ध उस दिन का दिवस मनाया गया। बर्लिन के मजदूरों ने ग्यारह अगस्त के दिन हड़ताल कर दी ।

12 अगस्त को सम्पूर्ण देश में हड़ताल हो गई और परिणामत: 'उनो' सरकार का पतन हुआ । इससे मजदूर सरकार बनाने में सफलता प्राप्त नहीं हुई । 1924 कें आरम्भ में मजदूर राजनीति की गति बदली और उसका अन्त हो गया । 1928 में मजदूर आन्दोलन की पराजय के कारण बुलगेरिया, पोलेण्ड और दूसरे पूंजीवादी देशों में थोड़े समय के लिये स्थायित्व आया । यूरोप और अमेरिका के पूंजीवादियों नें मिलकर एक बुद्धि चातुर्य की मयाव और दबाव की नीति का निर्माण किया जिसमें कुछ लोभ का दिखावा भी था । इस कार्य मैं सुधारवादी मजदूर नेताओं का सहयोग मिला इस नीति नें पूंजीवादी दुनिया के मजदूरों की राजनीति को शांत कर दिया ।

पूंजीवादी अर्थव्यवस्था युद्धोत्तर संकट का प्रतिफल है और इसने एक नये दौर में प्रवेश किया । इस दौर के साथ प्राविधिक और संगठनात्मक औद्योगिक युग का पुनर्निर्माण हुआ । मजदूर उत्पादन के विकास तथा उत्पादन के घनत्व के विकास ने उत्पादन को केन्द्रीभूत कर दिया । खाली दिखावे वाले बड़े-बड़े एकाधिकार वाले निगम अब वास्तविकता बन गये । आर्थिक स्मृद्धि नें पूंजीवादी व्यवस्था को मजबूत करने में सहयोग किया । आर्थिक स्मृद्धि बेरोजगारी में थोड़ी सी गिरावट कतिपय जीवन स्तर में उत्थान में कुछ समाज के मजदूर वर्गो में आने के कारण लोगों के मन में जमने लगा कि पूंजीवाद व्यवस्था ही स्मृद्धि ला सकती है ।

संयुक्त राज्य अमेरिका का जापान तथा जर्मनी की आर्थिक शक्तियां तेजी से उत्थान कर रही थी पुराने और नये औद्यौगिक राज्यों में अब जोरों से प्रतिस्पर्धा आरम्भ हो गई ।

आन्तरिक साम्राज्यवादी झगड़ा अब एक वास्तविकता बन गई । अधिकतर अधिनायक तन्त्रों ने इटली और जर्मनी में जोर पकड़ा इन राज्यों के साम्राज्यवादी हौंसले अब स्पष्ट होने लगे । इन राज्यों के मजदूर वर्गों नें साम्राज्यवादी तरीकों का बहिष्कार किया । जुलाई 1925 में करीब पांच लाख लोगों ने इटली में हड़ताल की । फ्रांस की उपनिवेशवाद की नीति के विरुद्ध अक्टूबर 1925 में वहां के मजदूरों ने एक विशाल प्रदर्शनात्मक हड़ताल कर दी । मई 1926 में एक आम हड़ताल ब्रिटेन में हुई जिससे वहां की आर्थिक दशा को लकवा मार गया । वियना के मजदूरों ने सन 1927 के जुलाई माह में राज्य के होने वाले हमलो से बचने के लिये अवरोधों का निर्माण करा लिया । जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया तथा अन्य औद्योगिक देशों के मजदूर संघर्षों नें वहां पूंजीवादी स्थायित्व के सपनों को करीब-करीब धूमिल कर दिया ।

16.3 पूंजीवादी देशों में आर्थिक संकट

पूंजीवादी विश्व की स्मृद्धि भी लम्बे समय तक नहीं चली । वहां भी संकट 1929 में शुरू और 1933 में बंद हुआ। इस समय पूंजीवादी विश्व ने सबसे अधिक जोखिम के जीवन को देखा। इस संकट ने पूंजीपति जीवन के सभी पक्षों को छुआ। जैसे उद्योग, खेती, बैंकिंग और वित्तीय व्यवस्था, व्यापार, बैंकिंग और वित्त व्यवस्था और व्यापार । एक ही वर्ष में 1929 के अन्त से लेकर 1930 के अंत तक केवल एक ही वर्ष में औद्योगिक उत्पादन गिर कर पूंजीवादी देशों मे 10 से 17 प्रतिशत तक हो गया।

पूंजीपति आर्थिक व्यवस्था 1932 में जाकर सबसे अधिक गिर गई उस समय के औद्योगिक उत्पादन पूर्व संकट अवस्था के मुकाबले केवल 46% अमेरिका में थे-जर्मनी में 47% और ब्रिटेन में सिर्फ 16%, रहे।

औद्योगिक संकट के साथ कृषि संकट भी मिल गया और स्थिति को और भी खराब कर गया। कच्चे माल और खाद्य सामग्रियों के दामो में गिरावट ने कृषि उत्पादन मे भी गिरावट ला दी। उसके उत्पादन का गिराव सन् 1929-33 में 1/3 भाग हो गया। वित्तीय और बैकिंग व्यवस्था को पूर्णत: निरुत्साहित किया गया। पूंजीपति विश्व में जनता का बाहुल्य आर्थिक संकट से बुरी तरह परेशान हुआ। पूंजीपतियों ने संकट का सारा बोझ अपने ऊपर लेने का प्रयास किया। सबसे अधिक नुकसान आर्थिक संकट से मजदूर वर्ग को हुआ मजदूर दो तरफ से सताया गया एक तो उसकी तनख्वाह में लगातार गिरावट हुई दूसरे उसी को बेरोजगारी का मुंह भी देखना पड़ा। अधिकतर पूंजीपति राज्यों में तनख्वाह की रकम गिर कर 30 से 50% तक चली गई। बेरोजगारी की ऊंचाइयां अकल्पनीय स्तर तक पहुंच गई। 3.50 लाख से भी अधिक लोग सड़कों पर आ गये और काम के बिना बेरोजगार हो गये। 260 लाख से भी अधिक लोग अमेरिका के 55 लाख जर्मनी के 30 लाख, ब्रिटेन के 28 लाख से ज्यादा, जापान के और 23 लाख बेरोजगार फ्रांस के थे।

इससे भी अधिक संख्या ऐसे मजदूरों की भी रही थी जो अपने आपको अर्ध रोजगार उपलब्ध समझते थे। सरकार नें छंटनी योजना के आधार पर व्यवस्थित कटौती बेरोजगारी बकाया राशियों में तथा अन्य सामाजिक लाभांशों मे कर दी। बहुत सारे देशों में सरकारी बेरोजगार व्यवस्था ही नहीं थी। जैसे फ्रांस में कोई व्यवस्था नहीं। लाखों लोग संयुक्त राज्य की सड़क खूंद रहे थे जर्मनी और ब्रिटेन में भी रोंदी जा रही थी दूसरे अन्य राज्य रोजगार और पेट-भराई की राह की खोज में थे। संकट नें लाखों फार्मों को तबाह कर दिया। करीब एक लाख कर्जदार या (दिवाला आउट) अमेरिका के फार्मों को सन 1929-33 में बेचने के लिये रख दिया गया बहुत सारे पूंजीपति राज्यों के फार्म भी हथोड़ के नीचे आ गये। इनकी संख्या तीन गुना हो गई थी। नियम के अनुसार वे छोटे फार्मों की गिनती में आते थे। सैनिक बेरोजगारों को गरीब देश के निवासियों द्वारा पुन: शक्तिशाली बनाया गया। संकट से सताये सैकड़ों हजारों कलाकार और छोटे व्यापारी रोटी रोजी के लिये मुहताज थे।

मजदूरों की अत्यधिक गिरती माली और कानूनी दशाओं, मध्यम वर्ग के लोगों की हालत ने पूंजीपति देशों में वर्ग संघर्ष को उत्तेजित किया। हड़ताली आन्दोलन उठे। 1929-33

की अवधि में दुनिया के पूंजीपति राज्यों में 19,000 औद्योगिक हड़तालें हुई जिसमें 85,000 कर्मचारियों ने भाग लिया।

पगार कटौती, नौकरी सें बर्खास्ती, सामाजिक सुरक्षा भत्ते में कटौती, और सरकार के आपातकालीन अधिनियमों के विरोध में मजदूर तबके नें संघर्ष भरे कदम उठायें। संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, पौलेण्ड, हंगरी, रूमानिया और चेकोस्लोवाकिया में इस अविध में अनेक हड़तालें हुई जिन्होंने पुलिस के साथ टककर ली। अक्टूबर 1930 में बर्लिन के 1,30, 000 धातु सम्बन्धी फैक्ट्रियों में काम करने वाले मजदूर हड़ताल पर चले गये । खान मजदूरों की बड़ी हड़तालें रूस में हुई और पोलेण्ड के कोयला खदानों में भी हुइ जो सन् 1931 के आरम्भ की बात है । एक सितम्बर 1930 में हंगरी के अन्दर मजदूरों का मौन प्रदर्शन हुआ । एक साल बाद ही वह देश मजदूरों के राजनीतिक प्रदर्शन द्वारा हिला दिया गया । सरकार ने मजदूरों के विरुद्ध सेना-तोपखाना और पुलिस का प्रयोग किया ।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में खान के मजदूरों ने 1931 के मध्य में उन जीवन स्तर हेतु हड़ताल कर दी। मजदूरों से पुलिस की भिडंत हुई जिसमे पुलिस ने अग्नि उपकरण और आँसू गैस का प्रयोग किया। बेरोजगारी के उत्थान के साथ ही बेरोजगारी आन्दोलन का भी विस्तार हुआ और उन्होंने सामाजिक सुरक्षा की मांग की । इसके साथ ही उन्होंने जन कल्याण के कार्यों को हाथ में लेने की भी मांग करी जिससे उनके परिवार के लोगों का पेट भरा जा सके । अमेरिका जर्मनी, पोलेण्ड, चेकोस्लोवाकिया, ब्रिटेन, फ्रांस, आस्ट्रिया, कनाडा में भूखरेलियों का आयोजन किया गया तथा वहां सर्वत्र बेराजगारों की समितियां उठ खड़ी हुई । किसान आंदोलन की लहर उठती ही जा रही थी । जिसने, अनेक राज्यों को हिला दिया किसानों ने पोलेण्ड में एक बड़ा सशस्त्र विद्रोह कर दिया जो 1937 की गर्मी में हुआ । बहुम्त के आन्दोलन ने सम्पूर्ण जापान को शोक लिया । किसानों के आन्दोलन की लहर ने सम्पूर्ण अमेरिका को प्रभावित किया ।

पूंजीवादी विश्व ने बहुत गहरे आर्थिक संकट को बर्दास्त किया । इसके साथ ही मजदूर वर्ग के असंतोष ने यूरोप के राज्यों में अधिकनायक तंत्री राज्य की स्थापना की सम्भावना के दरवाजे खोल दिये । अधिनायकवादी देशों के 1930 के दशांक के प्रारम्भ में मजदूर वर्ग पर हमला करने का अधिकार सा बन गया । बड़ी बात तो यह है कि अधिनायकवाद तो अब शक्तिशाली और तीव्रगामी आन्दोलन बन गया जिन्हें मध्यम वर्ग की जनता का पूरा सहारा था । 1933 में हिटलर के नेतृत्व में नाजीवाद का अभ्युदय हुआ । फासिज्म की प्रवृत्ति स्पेन आस्ट्रिया और फ्रांस में दृष्टिगोचर हुई । इन राजो के मजदूरों ने फासिज्म के विरुद्ध संयुक्त कार्रवाई करने का संकल्प किया । केवल एक तबके के लिये फासिज्म राज्य को चुनौती देना असम्भव था 1934 में स्पेन के मजदूरों ने अपने अधिनायकी राज्य के विरुद्ध हड़ताल कर दी । तानाशाह इटली द्वारा ईथोपिया पर हमले का सभी मजदूर हलको ने यूरोप के अन्दर विरोध किया ।

3 सितम्बर 1934 को इथोपियन लोगों की रक्षा हेतु एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन की रचना की गई । इस परिचर्चा में यूरोप के सभी मजदूर ट्रेड यूनियन नेताओं ने भाग लिया

1936 में लोकप्रिय फ्रंट ने फ्रांस में विजय प्राप्त की जिसने मजदूर तबके के हौंसले बुलन्द कर दिये । बहुमत की भीड़ के प्रदर्शन ने सम्पूर्ण देश में एक लहर दौड़ा दी जिसकी मांग थी कि हमारी पगार बढ़ाओ छुट्रियों के पैसे दो और मजदूर संगठनों को मान्यता प्रदान करो । इतिहास में पहली बार कानून बना कि केवल हफ्ते में 40 घण्टे काम लिया जाय और एक दिन छुट्टी हो । मजदूर एकता के अधिकार और भी बढ़ाये गयें । और आगे यह कि स्पेन में भी लोकप्रिय फ्रंट को विजय मिली जिसने मजदूर आन्दोलन को सम्बल प्रदान किया ।

16.4 फासिस्ट राज्यों का उदय एवं मजदूर आंदोलन

दूसरे महायुद्ध के आरम्भ से ही राजनीति की स्थिति में परिवर्तन आया । अधिनायकवादी जर्मनी ने यूरोप के अनेक राज्यों को कब्जे में कर लिया । अधिनायकवादी इटली का आक्रमण इथोपिया पर अधिनायकवादी शक्ति का स्पेन में दखल, जापान का चीन पर हमला, आस्ट्रिया के सेजुर पर जर्मनी का हमला और फिर उसका चेकोस्लोवाकिया । इस प्रकार को क्रमिक अवस्थाओं के माध्यम से अधिनायक-शक्तियों ने दूसरे युद्ध को ज्वालाएं प्रज्ज्वलित कर दी।

लोकप्रिय संघर्ष जो जर्मनी, इटली और जापान के, विरुद्ध खड़ा हुआ वह संघर्ष राष्ट्रीय स्वतंत्रता और प्रजातंत्र के हेतु था । इन प्रतिरोधक आन्दोलनों मे मजदूर वर्ग के लोगों ने सक्रियता सें भाग लिया । फ्रांस में मजदूर लोगों नें अपने संघर्षरत इकाइयों के कार्यकलापों को दुगुना कर दिया हमले के विरुद्ध कई याने सैकड़ों हजारों मजदूरों ने जो खानों से संबन्धित थे उत्तरी भाग में हड़ताल कर दी। होलेण्ड की प्रथम एवं आम हड़ताल जो फरवरी में हुई सम्पूर्ण देश में फैल गई । बेलजियम में एक हड़ताल की लहर चली । इनमें सबसे जोरदार हड़ताल सेकड़ों हजार मजदूरों की थी जो मई, 1941 में लीग जिले में हुई । नार्वे की राजधानी में भी अधिनायक विरोधी मजदूर प्रदर्शन हुए जो प्रथम मई, 1941 को घटित हुए ।

दो युद्धों के मध्य की राजनीति का नक्शा बनाने में मजदूर संघर्ष का योगदान रहा है । मजदूर वर्ग कहीं भी अपने विरोधी संघर्ष से सर्वहारा हुकूमन बनाने में सफलता नहीं प्राप्त कर सके । मगर उनका योगदान युद्ध के उपरान्त के विश्व को बनाने में अवश्य रहा क्योंकि उन्होंने साम्राज्यवाद और अधिनायकवाद का विरोध किया था । इस आन्दोलन ने तीसरे विश्व सें उपनिवेशवाद को समाप्त करने में सहयोग किया ।

16.5 मजदूरों के प्रति राज्य का दृष्टिकोण

उपर्युक्त विश्लेषण में हमने पूंजीपति राज्यों में मजदूर चेतना को दर्शाने में सफलता प्राप्त की है। यह दर्शानेवाला ढांचा दो विश्व युद्धों के बीच का है । मगर अब यह दर्शाना भी बहुत जरूरी हो गया है कि उन राज्यों का दृष्टिकोण अपनी मजदूर जनता के प्रति क्या रहा जो उनके अधीन उपनिवेशों में रहती थी। इसके पूर्व यह समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है कि उपनिवेशों में मजदूर आन्दोलन के कारण और उद्देश्य क्या है -? यूरोप और अमेरिका में मजदूर आंदोलन का उद्देश्य अपने आपको पूँजीपतियों के जुल्मों से रक्षा करना था । इसी क्रम में उन्होंने पूंजीवादी देशों के अधिनायकवादी जुल्मों से लोहा लिया, उनके विरुद्ध आन्दोलन किया । उन्होंने मजदूर संगठनों के निर्माण में सफलता प्राप्त कर ली जैसे व्यापार संगठन जिसके माध्यम से वे

अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ सकते थे इससे अधिक बात यह थी कि उन्हें बाहर से समाजवादी राजनीतिक दलों का सहारा भी मिलता ही था।

जिज्ञासावश हम यहां सूचित करते है कि मजदूर वर्ग के संघर्ष का लक्ष्य उपनिवेशों में यही है जो उन्हीं से संबन्धित उनके पूंजीपति राज्यों में रहा है । सर्वश्रेष्ठ बात यह है कि उनका संघर्ष पूंजीवादी मजदूर तबके को अब यह निर्णायक फैसला करना था कि उन्हें उपनिवेशों में कैसे संघर्ष चलाना है? आपने अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप को दर्शाने हेतु मजदूर तबके को अपने पूँजीपतियों राज्यों का रुख देखना पड़ता था । मजदूर समाज का वह तबका जिसमें असंतोष व्याप्त था । राष्ट्रीय आन्दोलन के कारण युद्धोत्तर राजनीति और भी अधिक उग्र हो गई । उपनिवेशों में राष्ट्रीय आंदोलनों को सहयोग सोवियत रूस से मिला, तो मजदूर वर्ग ने आर्थिक और राजनीतिक लक्ष्यों हेतु साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया । राष्ट्रीय आन्दोलन केवल मजदूरों तक ही सीमित न रहा । वैसे ये बहुत लोकप्रिय संघर्ष रहा जिन्हें विभिन्न सामाजिक संगठनों का सहारा मिलता था और क्योंकि मजदूर वर्ग छोटे संगठनों की श्रेणी में आता था जिन्हें बहुत प्रभावपूर्ण योगदान राष्ट्रीय आन्दोलन में करना पड़ता था और वहां आन्दोलन का नेतृत्व उनके हाथों में नहीं होता था । आन्दोलनों का नेतृत्व प्राय पूंजीपतियों के ही हाथों में रहता था । पूंजीपति नेतृत्व एक प्रगतिशील नेतृत्व प्रदान कर सकते है । यह पहले किसी को विदित न था । यह प्रश्न कम्युनिस्ट अन्तर्राष्ट्रीयता के अन्तर्गत बड़े प्रभावशाली तरीके से वाद-विवाद का विषय बन गया ।लेनिन ने वहाँ जार दकर कहा कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम पूंजीपतियों के नेतृत्व में क्रांतिकारी कार्य कर रहा है । मजदूर वर्गों को चाहिए कि वे अपने आपको उनसे सम्बन्धित कर ले ।

लेटिन अमेरिका के गुलाम मुल्कों में न केवल मजदूर वर्ग ही बल्कि किसान लोगों ने, शहरों में मध्यम वर्ग ने तथा बुद्धिजीवियों तथा विद्यार्थियों ने, भी विदेशी शासन को उतार फेंकने में सहयोग किया । उनकी मांग उनके जीवन स्तर और न्याय के लिए भी थी। कम्युनिस्ट दर्शन में विश्वास करते थे, उन्होंने उपनिवेशों में मजदूर संगठनों द्वारा संघर्ष को सहारा प्रदान किया। मजदूर समाज के दूसरे तबके ने जो कि देश प्रेम के मनोवैज्ञानिक चेतन्यता में विश्वास करते थे उन्होंने अपनी पित्रभूमि की हिमायत की जो अपने उपनिवेशों में शोषण कर रहे थे । अधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है कि उपनिवेश में मजदूरों का चरित्र विभिन्न है । वहां औद्योगिक प्रगति देरी से हुई इसलिये वहां मजदूरों की संख्या भी कम रही । उपनिवेशों ने तो औद्योगिकरण के बौने स्वरूप का ही अनुभव किया था क्योंकि साम्राज्यवादियों ने उनका शोषण किया था। मजदूरों का बाहुत्म किसान परिप्रेक्ष्य से बनना था जबकि देशों में किसान तो कही लगता ही नही था । मजदूरों के बाहुल्य ने खेतीहर, मजदूर: तबके की आवाज को बुलन्द किया। संकुचित औद्योगिकरण कें कारण मजदूर वर्ग कतिपय शहरों तक ही सीमित रहा ।

उनके साम्राज्यवादी मालिकों ने उन्हें द्वितीय महायुद्ध में सहयोग हेतु मजबूर किया । युद्ध का बोझ इस प्रकार उपनिवेशों के कंधों पर डाल दिया गया । औद्योगिक मजदूरों को मुद्रास्फीति के संकट का सामना भी करना पड़ा और उन्हें आवश्यक वस्तुओं की कमी भी रही क्योंकि वे वस्तुएं युद्ध सामग्री के निर्माण हेतु आरक्षित कर दी जाती थी । युवावर्ग में व्यापक

असंतोष व्याप्त था क्योंकि रोजगार योजनाओं की उपलब्धि का अभाव था । भारत और चीन में विशाल मजदूर असंतोष चहुंतरफ व्याप्त हो गया ।

युद्धोत्तर राजनीति ने आगे और उग्रता धारण कर ली क्योंकि वहां राष्ट्रीय आन्दोलन का विस्तार हुआ । राष्ट्रीय आन्दोलन का आगे सोवियत रूस से भी सहारा मिला। उपनिवेशों में अब मजदूर वर्ग ने साम्राज्यवादियों के खिलाफ आर्थिक और राजनीतिक संघर्ष को सम्मिलित कर लिया।

अब राष्ट्रीय संघर्ष केवल मजदूर वर्ग तक ही सीमित न रहा। कामकाजी लोगों जो अर्जेनटीना, ब्राजील, मेक्सिको, पेरू, उरूग्वे और चीन में रहने थे कृषि सुधार की मांग की, आठ घण्टे काम, तनख्वाओं में बढ़ोत्तरी, वृद्ध आयु पेंशन, औरतों और बच्चों की श्रम सुरक्षा व्यापार 'एकता के निर्माण का अधिकार तथा विश्व विद्यालय सुधारों की मांग की ।

जनता का बहुत बड़ा भाग साम्राज्यवादी और जागीरवादी सिद्धान्तों के विरुद्ध आकर्षित हुआ। यह झुकाव चीन, भारत, कोरिया इन्डोनेशिया में देखा गया । विदेशी सत्ता के विरुद्ध सीरिया, लेबनान, ईराक, मिस्त्र, लीबिया ,सूडान और सोमाली में आवाजें उठाई गई । संघर्ष के प्रथम कदम जो उपनिवेशवाद के विरुद्ध उठें वे कदम अफ्रीका के उष्ण कटिबंध के गुलाम देशों के थे । कई बार सताए लोगों के उत्थान को बेरहमी के साथ कुचल दिया गया । ये कारनामे सम्राज्यवादियों के थे । इसके उपरान्त भी तुर्की, इरान, अफगानिस्तान और मंगोलिया के लोग अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने में सफल रहे ।

उध्वॅगामी राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन विश्व राजनीति की एक सक्रिय व गतिशील विशेषता बन गई।

16.6 मजदूरों का मुख्य उद्देश्य

साम्राज्यवाद और जागीरदारी के विरुद्ध आन्दोलन करके मंगोलिया ने 1921 में सफलता प्राप्त कर ली। इस प्रकार मंगोलिया सम्राज्यवाद के उपनिवेशवाद से अलग-थलग हो गया । भारत में असहयोग आन्दोलन ने साम्राज्यवाद के विरुद्ध हवा दी। असहयोग आन्दोलन को मजदूर वर्ग और किसान मजदूर के असंतोष नें सहारा दिया 1920 के दशक में मजदूर वर्ग के आन्दोलन में उत्थान हुआ । बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, अहमदाबाद, कानपुर इससे प्रभावित हुए कपड़ा मिलों से संबंधित मजदूरों ने बम्बई में सन् 1928 में हड़ताल कर दी जिसका नेतृत्व कम्युनिस्टों ने किया।

एक मौन हड़ताल चीन में रेलवे कर्मचारियों ने सन् 1923 में की जो सरकार ने कुचल दी। यहाँ मजदूर वर्ग ने एक दूसरा स्वतंत्र मार्ग ग्रहण किया जो दूसरे राष्ट्रीय संग्राम के विरुद्ध मार्ग था और एक गलत रास्ता था । वे कम्युमिंटांग सरकार, जो उस समय चीन की पूंजीपति सरकार थी के विरुद्ध काम करना चाहते थे। पराजय के कारण कम्युनिस्टों ने सबक ग्रहण किया जो उन्हें रेलवे हड़ताल में मिली थी तो अब उन्होंने क्युमिन्टांग सरकार के साथ सहयोग करना आरंभ कर दिया। 30 मई 1925 को संघाई के चीन मजदूरों और विद्यार्थियों ने मिलकर ब्रिटिश और जापानी सम्राज्य के विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया। आन्दोलन को सम्राज्यवादी सरकार ने बुरी तरह से कुचल दिया। क्युमिन्टांग ने मजदूर वर्ग के लिये खाई खोद दी ।

16.7 राष्ट्रीय आन्दोलन और मजदूर

1930 के दशक में मजदूर वर्ग राजनीति को उपनिवेशों में और भी उग्र बना दिया गया क्योंकि उस समय 1929 - 31 का आर्थिक संकट आया था । जैसे कृषि पदार्थों के भाव गिरे किसानों को अपने मालिक को किराया देने हेतु अपनी जमीनें बेच देनी पड़ी । अधिकतर मामलों में जमीन मालिकों ने ही अपनी जमीन वापस ले ली । किसान अपने जमींदारों के विरुद्ध संघर्ष पर उतर आये क्योंकि जमीदारों उपनिवेशवादियों के साथ सांठ-गांठ कर रहे थे । जागीरदारों के विरुद्ध हिंदुस्तान में भी शक्ति जुटाई गई और इसमें सहयोग कांग्रेस दल ने किया और कम्युनिस्टों का भी सहयोग रहा । चीन के अनेक प्रान्तों में इस समय जागीरदारी प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन फैल रहा था। वहां सोवियत कम्युनिस्टों कें नेनृत्व में अनेक अंग सक्रिय थे जिन्होंने मजदूर और किसान वर्ग का शासन स्थापित कर दिया।

वियतनाम के मजदूर और किसान साम्राज्यवाद और जागीरदारों के विरुद्ध हो गये । विरोध का नेतृत्व कम्युनिस्टों नें ही किया । उन्होंने शक्ति को अपने हाथ में ले लिया और सोवियत की स्थापना कर दी और फिर उनसे ही जमीनों को जात कर लिया । यहां जनता का शासन तीन वर्ष चला । उपनिवेशवादियों ने किसानों के पुन: उठे विद्रोह को निर्दयता से कुचल दिया जिसमें विद्रोहियों को दबाने के लिये उन्होंने बमबारी तक का भी सहारा लिया । इसी अवधि में मिश्र के मजदूर समाज ने ब्रिटिश उपनिवेशवादियों के विरुद्ध अपने लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु दो बार प्रदर्शन किये । लेटिन अमेरिका में भी संघर्ष की लपटें साम्राज्यवादियों के विरुद्ध उठी । चीन में तो मजदूरों ने 1932 में ही सोवियत शासन की घोषणा कर दी । 1930 के दशांक में मजदूर-किसानों के आन्दोलन और संघर्ष ने बहुत शक्ति साम्राज्यवादियों के विरुद्ध बटोरती चीन पर जापानी सम्राज्यवादियों के हमले ने वहां के मजदूर आंदोलन के रूख को बिल्कुल बदल दिया। यही कारण है कि वहां के मजदूर किसान ने अपने आपको कम्युनिस्ट नेतृत्व के अन्तर्गत जापानी सम्राज्यवादियों से लोहा लेने के लिये तैयार किया। इसके लिये उन्होंने जापानी सेना से मुकाबले हेतु गुरिल्ला युद्ध कला को अपनाया ।

लेटिन अमेरिका के देशों में राष्ट्रीय और प्रजातांत्रिक संघर्ष ने लोकप्रिय नारे के सहारे साम्राज्यवादी शक्ति के विरुद्ध मोर्चे का निर्माण किया जिसने अधिनायकवाद के प्रचार-प्रसार को करारी चोट पहुंचाई । चीन में 1936 में एक लोकप्रिय मोर्चे की स्थापना हो गई वहां मजदूर वर्ग ने बाहर के समाज का सहारा लेने के प्रारम्भिक कदम उठाये ताकि राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम का निर्वाह किया जा सके। यहां सरकार के विरुद्ध: अनेक हड़तालें हुई, अन्ततोगत्वा वे सरकार से कुछ आर्थिक और सामाजिक लाभ प्राप्त करने में सफल रहे । सन् 1937 में एक लोकप्रिय क्रांतिकारी मोर्चे का गठन क्यूबा में भी हुआ । इसमें व्यापार संघ और किसान संगठन सम्मिलित हुए। इस मोर्चे ने सरकार को कतिपय मजदूर लाभ देने हेतु मजबूर कर दिया मेक्सिको के मजदूर वर्ग के संघर्ष ने सरकार को मजबूर किया कि वह राष्ट्रीय क्रांतिकारी दल की कृषि सुधार संबंधी मांगों को स्वीकार करे तथा विदेशी पूंजी के माध्यम से रेलवे और तेल उद्योग का राष्ट्रीकरण करें। एक बार और द्वितीय महायुद्ध ने साम्राज्यवादी विश्व विवाद को एक ही सतह पर ला दिया । सम्राज्यवादियों ने अपने उपनिवेशों को आमादा किया कि वे उनके हित में विश्व युद्ध में भाग लेवें। परन्तु उपनिवेशों की जनता ने उनके इस अप्रजातांत्रिक कदम

के विरुद्ध विप्लव कर दिया। इस प्रकार के दृष्टिकोण ने मजदूर-किसान आंदोलन को उपनिवेशों में और भी अधिक विशाल बना दिया। लोकप्रिय प्रतिगामी-सम्राज्यवादी आन्दोलन को अमेरिका और यूरोप के मजदूरों से इतना अधिक सहारा और शक्ति मिल गई कि अंततोगत्वा पूंजीवादी सम्राज्यवाद दुनिया से विदा हो गया।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति ने अनेक उपनिवेशों को आजाद कर दिया । पूंजीवादी विश्व के देशों में जो मजदूर संघर्ष की लहर चली उसने एक ऐसे ग्रन्थ की रचना कर डाली जिससे विश्व इतिहास प्रभावित हुआ । उपनिवेशों के मजदूर संघर्ष को प्रेरणा यही से प्राप्त हुई । विश्व इतिहास में एक नये अध्याय का आरंभ हुआ जिसमें मजदूरों की भूमिका को शाश्वत माना जाने लगा ।

16.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बी. टी. रनदिबे; स्वतंत्रता संग्राम तथा उसके बाद में, नई दिल्ली 1998
2. डेगरास; कम्युनिस्ट अंतर्राष्ट्रवाद 1919-43, अधिकार प्रमाण पत्र (लन्दन), तीन भाग ।
3. अबेनडरोथ: यूरोप के मजदूर वर्ग का संक्षिप्त इतिहास ।
4. ट्रोटस्की: लेनिन के बाद का तीसरा अंतर्राष्ट्रवाद (N.Y.1936)।
5. हालस और हारमन; आशा के दिन; 1926 की आम हड़ताल (लन्दन) 1981।

इकाई-17

संयुक्त राज्य अमेरिका की अर्थव्यवस्था की सफलता व असफलता, रूजवैल्ट की 'न्यूडील' नीति

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 राष्ट्रपति रूजवेल्ट का परिचय

17.3 बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में संयुक्त राज्य अमेरिका की स्थिति।

17.4 आर्थिक मन्दी व उसके प्रभाव।

17.5 न्यूडील योजना

- 17.5.1 आपतकालीन राहत-कार्य
- 17.5.2 उद्योगों का पुर्नउद्धार
- 17.5.3 न्यूडील के अर्न्तगत प्राकृतिक साधनों की सुरक्षा और टेनेसी नदी घाटी प्रतिष्ठान।
- 17.5.4 मुद्रा व बैंकिंग
- 17.5.5 रूजवेल्ट का बायी ओर झुकाव
- 17.5.6 दबाव की राजनीति और सामाजिक सुरक्षा अधिनियम
- 17.5.7 मजदूर यूनियन को प्रोत्साहित करना
- 17.5.8 बड़े रोजगार

17.6 1936 का चुनाव

17.7 पुनरुत्थान व गिरावट

17.8 न्यूडील योजना के दोष व गुण

17.9 न्यूडील योजना की समीक्षा

17.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

17.0 उद्देश्य

इस इकाई में हमारा उद्देश्य अमेरिका के राष्ट्रपति एफ. डी. रुजवेल्ट द्वारा अमेरिका में आयी आर्थिक मन्दी से निपटने के लिये जो उपाय किये गये हैं उसकी संक्षिप्त जानकारी देना है । इस इकाई का अध्ययन कर लेने पर आपको निम्नलिखित बातों का ज्ञान हो जायेगा ।

— आर्थिक मंदी क्या है और क्यों उत्पन्न होती है ?

— आर्थिक मंदी से निपटने के लिये राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने व्यापार, मुद्रा व बैंक, कृषि क्षेत्र में क्या परिवर्तन किये हैं ।

— किये गये परिवर्तनों को न्यूडील का नाम दिया गया । इसका मुख्य उद्देश्य शोषित वर्ग का उत्थान था साथ ही उसके शब्दों में, "यदि निजी शक्ति को इतना बढ़ने दिया गया कि वह लोकतांत्रिक राज्य से ही अलग हो जाये, तो लोकतंत्र खतरे में पड़ जायेगा।" ऐसी निजी शक्ति का अन्त करना था ।

17.1 प्रस्तावना

संयुक्त राज्य अमेरिका प्रथम विश्वयुद्ध से पूर्व मुनरोसिद्धान्त का पालन करते हुए विश्व राजनीति से अलग-थलग रहा । किन्तु प्रथम विश्वयुद्ध में उसने मित्र देशों का साथ दिया और 1920 के पेरिस शान्ति समझौते में अमेरिका कें राष्ट्रपति वुडरोविल्सन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । शान्ति समझौते की आर्थिक धाराएं जिसके अन्तर्गत जर्मनी के युद्ध शस्त्रों को जब्त कर लिया गया एक बड़ी धन राशि जुर्माने के रूप में उससे वसूल करने की व्यवस्था की गई, इससे यूरोप में जर्मनी की मुद्रा मार्क का बहुत ज्यादा अवमूल्यन हो गया । मुद्रा स्फीति उत्पन्न हुई, जिससे अमेरिका अपने आपको नहीं बचा सका । अमेरिका में सट्टे बाजारी अपनी चरम सीमा पर पहुँची और इसका शीघ्र पतन ही प्रारम्भ हो गया । इसके कारण अनेक बैंक बन्द हो गये। इस संकट से निपटने के लिए रूजवेल्ट से पूर्व राष्ट्रपति हुअर ने कुछ उपाय किये परंतु उसे सहायता नहीं मिली । इस आर्थिक संकट के समय रूजवेल्ट ने 1932 का चुनाव लड़ा, जिसमे उसने अपने भाषणों के द्वारा अमेरिकी जनता में आत्म विश्वास पैदा किया और जो वचन उसने चुनाव के दौरान दिये, उसको उसने अक्षरश निभाया।

17.2 फ्रैंकलीन डिलानों रूजवेल्ट (1882 से 1945) का परिचय-

फ्रैंकलिन रूजवेल्ट का जन्म 30 जनवरी 1882 को न्यूयार्क स्थित हाईड पार्क में हुआ था। थियोडोर रूजवेल्ट दूर का उसका चचेरा भाई था । रूजवेल्ट की प्रारम्भिक शिक्षा दीक्षा गैरलॉन(Gorlon) में हुई । हारवर्ड से उसने स्नातक की उपाधि प्राप्त की, और कोलम्बिया विश्व विद्यालय से विधि की शिक्षा ली । शिक्षार्थी जीवन में उसमें ना तो महत्वाकांशा और ना असाधारण ज्ञान के चिन्ह ही दिखाई पड़ते थे किन्तु अपने राष्ट्रपति कार्यकाल में इसने दोनों का ही परिचय दिया, 1905 में उनसे ऐना एलीनार से विवाह किया और न्यूयार्क की एक लॉ कम्पनी में कार्य करना प्रारम्भ किया ।

सन् 1910 में उसने राजनैतिक जीवन प्रारम्भ किया जबकि वह न्यूयार्क की विधानसभा के लिये चुना गया। 1912 में उसने राष्ट्रपति पद के लिये वुडरो विल्सन का सक्रिय समर्थन किया । वह समुद्र व जहाजों का हमेशा शौकीन रहा था इसलिये 1913 में राष्ट्रपति विल्सन ने उसको नौसेना विभाग का उपसचिव नियुक्त किया और इस पद पर वह 8 साल (1913 से 21) तक कार्य करता रहा। इस पद के कार्य संचालन में उसने असामान्य कौशल का प्रदर्शन किया। 1920 ईसवी में डेमोक्रेटीक दल ने उसको उपराष्ट्रपति पद के लिये नामांकित किया । वो चुनाव तो हार गया किन्तु अपने दल में अत्यन्त लोकप्रिय और प्रभावी हो गया ।

वह पोलियो रोग से पीड़ित हुआ और लगभग 8 वर्ष तक शय्याग्रस्त रहा । पीड़ित होने के बावजूद वह निराश नहीं हुआ बल्कि पहले की अपेक्षा उसने अधिक कौशल दिखाया, मिलने

वालों से बातचीत करके उसने अपनी रूचि को जीवित रखा और 1918 में वह न्यूयार्क राज्य का गर्वनर चुना गया और दो वर्ष तक इस पद पर कार्य करता रहा और इसके चार वर्ष बाद ही योग्यता और दल की सहायता के बूते पर उसने सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया ।

राष्ट्रपति रूजवेल्ट का व्यक्तित्व बहुत संशलिस्ट था, जिसके अनेक पहलू हैं । कुलीन घराने में पालन पोषण होने के बावजूद उसमें अमेरिकी टसक न थी । क्योंकि वह स्वयं रोगग्रस्त रह चुका था। इसलिये दूसरों की पीड़ा देखकर उसका दिल भर आता था । उसका हृदय इतना कोमल था कि वह किसी को भी नाराज नहीं करना चाहता था । सबको प्रसन्न करने की आदत के कारण ही कुछ लोगों ने उसको 'दो सुखा' तक कह डाला । ईश्वर मे असीम निष्ठा के कारण वह अपने निजी व्यवहार तथा शासन नीति में नैतिकता का 'बहुत ध्यान रखता था स्वभाव से वह हंसमुख और परिहासी था किन्तु अवसर आने पर वह गंभीर भी हो जाता था। अपना काम दृढ़ संकल्प से करता था। उसके ज्ञान की सीमा बहुत संकुंचित थी उसका अध्ययन अधूरा था तर्क क्रिया अव्यवस्थित थी। भौतिक, विचार क्षमता के अभाव में वह अत: प्रज्ञा का ही विश्वास करता था। अर्थशास्त्र व इतिहास से तो वह नितांत अपरिचित था तथा अर्थ नीति निर्माण में वह अपने मित्रों का ही सहारा लेता था ।

इतिहासकार ऐलन नेविनस और हेनरी, एस कोमोगार का कहना है कि रूजवेल्ट में दो गुण थे, एक प्रगतिशील विचारो के प्रति व समर्पित था और दूसरा अमेरिकन समाज के सभी वर्गों का विश्वास प्राप्त करने की शक्ति थी । जब वह बीमार था तो उस समय यद्यपि वह सक्रिय राजनीति से अलग-थलग रहा फिर भी उसने इस काल मे अमेरिका के, राजनैतिक इतिहास का अध्ययन किया और पत्र व्यवहार व व्यक्तिगत सम्पर्क साधकर उसने एक व्यापक और समर्पित समर्थन जुटा लिया था । जब 1932 मे राष्ट्रपति बना तो वह अपने, समय का सबसे ज्यादा सूचना प्राप्त डेमोक्रेटिक नेता था ।

अनुभव व ज्ञान के अतिरिक्त उसको साधारण जनता में पूरा विश्वास था । राजनैतिक दृष्टि की और से कुशल था और नेतृत्व की कला को समझता था । वह साधनों, के जुटाने में अवसरवादी था, किन्तु अपने लक्ष्य की प्राप्ति में अडिग था । वह गैर जरूरी मुददों पर समझौता कर लेता था किन्तु जरूरी मुद्दों पर मुश्किल से कोई समझौता किया करता था। वह जानता था कि राजनीति कला व विज्ञान दोनों है । वह अमेरिका के भूतकाल को समझता था और जिस संसार में रहता था उसको जानता था और उसने भविष्य के संसार संगठन के बनाने, पर चिन्तन भी किया था । वह राजनीतिज्ञों पर विश्वास करता था किन्तु विशेषज्ञों पर भी भरोसा करता था । वह जनमत के प्रति बड़ा संवेदनशील था और जनमत को बदलने और उसको चुनौती देने में हिचकिचाता था । महत्वपूर्ण निर्णय लेते समय कभी-कभी वह बहुत ही असाधारण दिखाई देता था । उसमें अपार कार्यक्षमता थी । वह गम्भीर से गम्भीर समस्याओं को बहुत साधारण तरीके से लेता था । किसी योजना के प्रति कितना खर्च आता है, उसकी वह चिंता नहीं करता था और जो लोग उसका विरोध करते थे उनके प्रति वह छिछला प्रतिशोध का व्यवहार भी करता था ।

इन गुण दोषों के सम्मिश्रण के कारण उसका व्यक्तित्व विचित्र सा बन गया था, अत: उसकी यह विचित्रता ही अमेरिकी जनता की उसकी ओर आकर्षित करती थी। वह देशवासियों की अपार श्रद्धा एवं भक्ति का पात्र बन गया था । अमेरिकी इतिहास में उसकी टक्कर का कोई भी इतना प्रभावी चुनाव लड़ने वाला नहीं हुआ। अब उसकी सरल भाषा उसके सीधे सादे विचार जनता को मन्त्रमुग्ध कर देते थे। प्रभावित करने के लिये उसने एक और भी अनोखा उपाय निकाला था । समय-समय पर वह आकाशवाणी द्वारा ' 'अलावों के किनारे की वार्ता " (Fire side chats) प्रसारित करता रहता था जनता यह: समझती थी कि राष्ट्रपति उसको अपना विश्वासपात्र बनाता है । बड़ी-बड़ी समस्याओं को सुलझाने में रूज़वेल्ट की यही उक्ति अत्यन्त कारगर हुई । वह जनता की नब्ज को जानता था उसकी सफलता की यही एक मात्र कुंजी थी ।

इतिहासकार पारकिंस ने उसके व्यक्तित्व पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि समस्याओं के समाधान पर व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाया। वह सिद्धांत की अपेक्षा अनुभवों पर अधिक आधारित रहता था । उसने समस्याओं के समाधान के लिए हर उपाय अपनाये और जब कभी कोई उपाय विफल होता दिखाई देता तो वह उसे तत्काल त्याग भी देता था । वह इस बात को जानता था कि अमेरिका एक सभ्यता के संघर्ष में फंसा हुआ है। वह अमेरिकी गणतन्त्रीय आदर्शों के प्रति समर्पित था, फिर भी आदत से वह गरीबों का पक्ष लेता और विशेष अधिकार प्राप्त व शोषण करने वालों का वह शत्रु था । उसके प्रशंसक उसको अमेरिका के महानतम राष्ट्रपतियों में शामिल करते हैं । बल्कि कुछ का कहना यह है कि वाशिंगटन, लिंकन और ट्रूमैन के अतिरिक्त कोई भी ऐसा राष्ट्रपति नहीं हुआ जिसको राष्ट्रपति पदासीन होते ही एक साथ इतनी विस्मयकारी समस्याओं का सामना करना पड़ा हो जितनी का सामना को करना पड़ा। इसके विपरीत उसके शत्रुओं का कहना है कि वह जरूरत से ज्यादा सत्ता अपने हाथ में ही ' केन्द्रित करना चाहता थी और लापरवाही से इसने प्रशासन में बहुत अव्यवस्था व अपव्यय भी किया । उसके राजनैतिक हथकंडे कभी-कभी बड़े खराब होते थे और अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह अनुचित कार्य भी करता था और मूलभूत सिद्धान्तों को त्याग देता था ।

रूज़वेल्ट के व्यक्तित्व को लेकर डॉ. बनारसी प्रसाद सक्सैना का मत ज्यादा उचित दिखाई देता है। उनका कहना है कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था ने ऐसा पलटा खाया जिसको सम्भालने के लिए एक चतुर व साहसी व्यक्ति की आवश्यकता हुई, यदि यह कहावत सच है कि परिस्थितियाँ ही व्यक्ति को ऊपर उछालती है तो रूज़वेल्ट पर यह पूर्ण रूपेण चरितार्थ होती है, अर्थात् रूज़वेल्ट अपने युग का बच्चा था (Child of his age) उपरोक्त विचारों और रूज़वेल्ट की कृतियों की विवेचना से पूर्व यह आवश्यक प्रतीत होती है कि उन असन्तोषजनक और भयावह परिस्थितियों का विश्लेषण कर लिया जाये जिससे उसे दो, चार होना पड़ा, निदान से पहले रोग का कारण समझना ही उचित होता है।

17.3 बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में संयुक्त राज्य अमेरिका की स्थिति

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका के सामान्य एवम् व्यापक जीवन में जो उतार चढ़ाव हुए उनका सजीव चित्रण सरल कार्य नहीं है; क्योंकि उसमें कई परस्पर विरोधी तत्व

दृष्टिगोचर होते हैं। एक ओर देश धन धान्य से परिपूर्ण दिखाई पड़ता है तो दूसरी ओर गरीबी और असन्तोष के प्रत्यक्ष चिन्ह आंखों, के सामने आते हैं । एक ओर धन विकेन्द्रीकरण में निष्ठा तो दूसरी ओर सेठों, साहूकारों और बैंक यूनियनों में गठबन्धन तथा उनका प्रभाव एक ओर जनहित उपायों के परावर्तन की इच्छा तो दूसरी ओर स्वार्थी दलों, गुटों व व्यक्तियों का दबाव जो इन उपायों को कार्यान्वित करने में बाधा डालते हैं यदि एक ओर प्रगतिवाद की धारा बह रही है तो दूसरी और अनुदारवाद भी काले बादलों के समान देश पर छाया है।

संक्षिप्त में, युद्ध उत्तरकाल में संयुक्त राज्य अमेरिका में निस्वार्थ नेताओं का अभाव, आदर्शों का पतन, दलों व गुटों को हड़पने की पिपासा, ईमानदारी व बेईमानी में विवेक का अभाव पाया जाता था । अब पहले वाले राष्ट्रपति जैसे वाशिंगटन, जैफरसन, जैकसन के त्याग व तप की कहानियाँ पुरानी हो गई थी उनके स्थान पर एक नया देवता खोजने लगा था वह था- जीवन के चार लक्ष्यों अर्थात् धर्म, कर्म, काम और मोक्ष में से अब केवल दो अथवा अर्थ व काम का ही बोलबाला था । व्यापार व उद्योग का यह काल स्वर्णयुग कहा जाता था । सेठ, साहूकार व्यापारिक कम्पनियाँ, व्यापारिक संघ, व्यापारिक न्यास, सबका केवल एक ही लक्ष्य था- अधिकाधिक मात्रा में धन संचय राष्ट्रपतियों की यही धारणा थी कि शासन का प्रमुख कर्तव्य है कि उद्योगपतियों और व्यापारियों को भरसक लाभान्वित होने मे सहयोग दे। अत: जितने भी अधिनियम पास किये वे सबके सब प्रत्यक्ष रूप से पूँजीपतियों के ही हित में थे। एकाधिकार को रोकने तथा प्रतियोगिता संचार हेतु जो अधिनियम पारित नहीं हुए थे उनके द्वारा व्यापार व उद्योग का अभूतपूर्व संपिडन हुआ, संगठन विशेष रूप से चमत्कारिक संपिडीनकरण तो लोकहित के साधनों में हुआ । 1919 में केवल 22 ही व्यापार संपिडित हुए थे, उनकी संख्या 1926 में 100 हो गई । हजारों जनहितकारी कम्पनियाँ तो लुप्त ही हो गई और सारे देश का बिजली का कारोबार तीन ही व्यापारिक गुटों ने हथिया लिया। यही दशा टेलिफोन, तार और बैकों की हुई इसी प्रकार खुदरा वितरकों ने संपिडन कर लिया, इस प्रकार 1930 ईसवी तक ऐसे, निगमों का, जो बैंक का काम नहीं करती थी आधा मूलधन दो सौ विशाल व्यापारिक निगमों के हाथ में आ गया और इससे उनको 432 प्रतिशत आय होने लगी । परिस्थितियों की गम्भीरता की ओर अब जनता का ध्यान गया तब यह एक राजनैतिक विषय बन गया और आगे चलकर रूज़वेल्ट को यही समस्या सुलझानी पड़ी ।

न्यास विरोधी असफलता के कारण केवल आर्थिक प्रवृत्तियाँ ही नहीं बल्कि बड़े हद तक न्यायालय भी उसके लिए उत्तरदायी थे । पूँजीपति अदालतों से भय नहीं खाने थे जिससे अप्रत्यक्ष रूप से एकाधिकार को प्रोत्साहन मिला।

संपिडन तथा एकाधिकरण का अन्तिम परिणाम चाहे इतना ही घातक सिद्ध नहीं हुआ हो, उसका तत्कालीन फल अत्यन्त ही सन्तोषजनक रहा । उत्पादन शैली में उन्नति हुई । इसका स्पष्ट परिणाम यह हुआ कि अन्न व वस्त्र के उद्योग में श्रमिकों की संख्या कम होने लगी और वे दूसरे उद्योगों या कारखानों में कार्य करने लगे । भवन निर्माण कार्य में वृद्धि हुई, मोटरकार, रेफ़ीजेरेटर, बिजली के सामान बनाने के कारखानें बने और इनमें मजदूरों व लेखकों को नौकरी मिलने लगी। मध्यमवर्ग के लोगों का रहन-सहन का स्तर ऊँचा होने लगा। जो

सामान पहले कुलीनों के सुख का साधन समझा जाता था अब वह मध्यम वर्ग की आवश्यता की पूर्ति करने लगी । कारें, संयुक्त राज्य अमेरिका में घर-घर चलने लगी । 19 -7 8 ई तक दो करोड़ पैतालिस लाख मोटरें बनी । इन कारखानों में40,00,000 मजदूर काम करते थे । सरकार को सड़क निर्माण की योजना बनानी पड़ी और उस पर 1 अरब डालर व्यय किये गये ।

इसी प्रकार बिजली की खपत बढ़ने लगी तब उसके उत्पादन के साधन भी जुटाए गए। इसमें दस करोड़ मजदूर काम करते थे । 1926 तक बीस हजार सिनेमाघर बन गये । रेडियो व हवाई जहाजों का प्रचलन हुआ जिससे सूचना और यातायात दोनों में ही सुविधा हुई ।

भौतिक साधनों व सुविधाओं के विस्तार के साथ-साथ सामाजिक जीवन में भी परिवर्तन आया । वेतन भोगियों के रहन-सहन के स्तर में वृद्धि हुई । जीवन बीमाओं में वृद्धि हुई । मध्यम वर्ग, लघु बचत, में अधिक मात्रा में खाते खुलवाते गये ये लोग मूलधन खरीदने लगे ।

इस गुलाबी चित्र का एक अन्धकारमय पहलू भी था। इसमें प्रमुख विषय है नैतिक पतन 1920 ईसवी से नशा निषेध कानून कार्यान्वित तो होने लगा था किन्तु इसका बहुत वांछनीय परिणाम न हुआ क्योंकि अधिकांश अमेरिकी इसको एक राजनैतिक उपाय ही समझते थे । बलपूर्वक सुधार में उनकी निष्ठा नहीं थी । जो पहले से मदिरापान के आदी थे, वे तो पीते ही रहे औरों ने भी नियम उल्लंघन की जिद से पीना शुरू कर दिया । मदिरा बनाना व बेचना दोनों ही अपराध थे अत: विभिन्न क्षेत्रों में मदिरा व्यापार प्रसार हेतु गुण्डों का उपयोग करते थे । इन गुण्डों का स्थानीय नेताओं से तालमेल रहता था । इस प्रकार धनवान और मध्यमवर्ग के लोग चैन की बंसी बजा रहे थे तो दूसरी ओर सर्वहारा वर्ग की दशा बिगड़ती जा रही थी । 1919 के बाद उनकी मांगों को ठुकराया जाने लगा और उनकी हड़तालें निर्दयता से तोड़ी जाने लगी । न्यायालयों में भी उनके हितों के विरुद्ध फैसले दिए जाते थे और इस प्रकार श्रमिकों के वैधानिक अधिकारों का हनन हो गया ।

गावों की भी दशा संतोषजनक नहीं थी । 1919 तक तो किसान सम्पन्न रहे किंतु उनकी प्रगति में एक अड़चन थी वह थी ऋणों पर भारी ब्याज दर । अनाज की खपत देश में तो होती ही थी विदेशों में भी मांग निरंतर बढ़ती रही । किसानों ने ऋण लेकर नई भूमि खरीदना प्रारंभ कर दिया था लेकिन प्रथम विश्व युद्ध के समाप्त होते ही दशा बदल गई । भाव गिरने लगे और उत्पादन बढ़ता ही रहा । अन्य देश भी बड़ी मात्रा में अनाज का ऊत्पादन करने लगे । इनसे प्रतियोगिता में बाजी मारना आसान न था । इसके अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका की बड़ी हुई प्रशुल्क दरों के कारण यूरोपीय राष्ट्र अपने तैयार माल के बदले वहाँ का अनाज खरीदने में असमर्थ थे ।

देश में भोजन व्यवस्था में परिवर्तन तथा अप्रवासी आवागमन पर प्रतिबंध लगने के कारण जब श्रम दर बढ़ी, तब उत्पादन की लागत भी अधिक हो गई ।

ढुलाई भाड़ा दर व अनाज गोदामों का किराया भी बढ़ा । एक तरफ तो कृषि व्यवसाय में घाटा हो रहा था तो दूसरी तरफ करों के बढ़ने से किसानों की रीढ़ की हड्डी टूटी जा रही थी । उन्हें अपने खेत बन्धक करने पड़े । इस कारण उनकी सम्पत्ति का मूल्य भी गिरने लगा । कृषि यन्त्रों का आविष्कार व प्रयोग के फलस्वरूप ग्रामों की आबादी भी घटी । जो कानून पारित

किए गए, उनका ध्येय केवल उत्पादन वृद्धि था । उनमें उत्पादित वस्तुओं के वितरण की कोई व्यवस्था नहीं थी ।

संयुक्त राज्य अमेरिका में सबका एक ही लक्ष्य एक ही उद्देश्य था और वह था देश के वित्त पर अधिकार एवं एकाधिकार । इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु धनवानों को जो सबसे बड़ी सुविधा प्राप्त हुई वह थी उनका कांग्रेस और सीनेट पर प्रभाव । कुछ समय को छोड़कर कांग्रेस का संचालन दल के हाथ में ही रहा, इसकी निरन्तर एक ही नीति रही और वह थी धनवानों को लाभान्वित करवाना तथा इसी आशय के कानून बनाना ।

इस नीति का यह परिणाम हुआ कि एकाधिकार युक्त गुटों का प्रभुत्व बढ़ गया । आर्थिक व्यवस्था पर विशाल व्यापारिक संघ घने बादलों के समान छा गये । निगम संबंधी 80 प्रतिशत लाभ केवल एक हजार तीन सौ उन्चास निगमें ही हड़प लेती थी । शेष में 4,55,000 छोटी निगमों का हिस्सा लगता था । बाजार भाव का उतार चढ़ाव इन्हीं निगमों के हाथ में आ गया था। अत: उपभोगियों का शोषण होने लगा । जब मन्दी का समय आया तब विशाल बाजार भावों में कमी करना कठिन हो गया जिसके फलस्वरूप बेरोजगारी बढ़ी और स्थिति अत्यन्त विषम हो गई । संयुक्त राज्य अमेरिका की आर्थिक व्यवस्था में इसका दोष था निगमों के संगठन का नये उद्योगों का संचालन कारनैगि और रोगफैलर जैसे लोगों के हाथों में था ये लोग अपने-अपने उद्योगों के स्वामी भी थे और प्रमुख भी । इन लोगों का ध्येय था धन बटोरना । परिणाम यह हुआ कि उद्योगों का अधिकांश भाग थोड़े व्यक्तियों के हाथों में पहुँच गया था । धनवानों के अधिक धनी बन जाने से साधारण जनता का अहित हुआ ।

इसका प्रमाण यह हुआ कि वेतन और लाभ की वृद्धि के अनुपात में मजदूरों की मजदूरी नहीं बढ़ी । एक के पास तो विपुल धन था । दूसरों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लाले थे । धनढ्यों ने तो अपना धन बचाकर उद्योग प्रसार में लगा दिया । इसके फलस्वरूप धन बढ़ा । किन्तु मजदूरों के पास इतना अतिरिक्त धन शेष न बचता था कि उत्पादित वस्तुओं को खरीद सके । सामान तो बनकर तैयार होता रहा, किन्तु उनकी निकासी नहीं हो पाती । देश में महंगे भाव पर माल कौन खरीदता? और अत्याधिक शुल्क के कारण विदेशों में माल की खपत की आशा करना व्यर्थ था ।

सम्पन्नता के फलस्वरूप मध्यम वर्ग का जीवन स्तर ऊपर उठा । कार, रेफ्रिजरेटर, विद्युत चलित साधनों को आवश्यक समझकर उन्हें किस्तों के आधार पर खरीदने लगे । आय कम और खर्च अधिक । इस प्रकार उपभोक्ता पर ऋण का भार बढ़ने लगा । ऋण लेने की ऐसी प्रथा चली । कोई भी वर्ग इससे नहीं बचा । चाहे वह किसान हो या छोटे कारखाने का मालिक, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष चाहे वह दुकानदार हो या ग्राहक इस परिस्थिति पर उर्दू भाषा की पंक्तियां पूरी उतरती थी-

(1) "अब तो आराम से गुजरती है ।
आकेबत की खबर खुदा जाने ।"

(2) “कर्ज की पिते मय थे और यह समझते थे नहीं (मदिरा)
रंग लायेगी हमारी फ़ाका मस्ती एक दिन"

उपरोक्त विवरण की पृष्ठ भूमि में 1929-30 की मन्दी के कारणों का विश्लेषण किया जा सकता है । यह मन्दी विश्वव्यापी थी इसका श्री गणेश अमेरिका से हुआ । इसके कई कारण बताये जाते है । प्रथम यह कि संयुक्त राज्य में बचत की राशि तो अत्यधिक थी, किन्तु उपभोक्ताओं को ये उपलब्ध न थी, इस बचत को निरन्तर उद्योग प्रसार में लगाया जाता रहा । परन्तु ये किसी ने न सोचा कि कभी ऐसा भी समय आ सकता है कि उत्पादन खपत से अधिक हो पायेगा, माल इकट्ठा होता रहा और बाजार में इसकी मांग ना रही । इस धन से, धन बढ़ाने का मार्ग ही बन्द हो जायेगा । ऋण राशि को बढ़ाकर बाजार को प्रोत्साहन दिया जाता रहा । किंतु अब ऋणों का भुगतान होने लगा अब बाजार संकुचित होने लगा बाजार के संकुचित होते ही उद्योग प्रसार में कमी होने लगी । उद्योग प्रसार के घटने के कारण बेरोजगारी बढ़ी । फलत: जनता का विश्वास शिथिल होने लगा । मन्दी को रोकने का एक उपाय ये था कि उत्पादन की गतिविधि को जारी रखकर क्रय दर में कटौती की जाय इससे माल की खपत की मात्रा बढ़ जाती और उत्पादन का काम चलता रहता । किन्तु उद्योगपतियों ने क्रय दर तो वही रखी और उत्पादन में कमी कर दी । इसका भयानक परिणाम यह हुआ कि बेरोजगारी बढ़ी । संयुक्त राज्य अमेरिकी अर्थव्यवस्था में एक और भी दोष था कि वह ये कि टिकाऊ माल की बिक्री पर उसको निर्भरता। विपत्तिकाल में मनुष्य भोजन के बिना तो नहीं रह सकता पर मकान और मोटर खरीदने का विचार उसके लिए असम्भव हो जाता है । पर मोटर और मकान बनते ही जा रहे थे उसी अनुपात में उसके ग्राहकों की संख्या कम हो रही थी । इसलिए इतिहासकार नेवेन्स ने ठीक ही लिखा है कि राष्ट्र की उत्पादक क्षमता उसकी उपभोक्ता क्षमता से अधिक थी । इसके अतिरिक्त विदेशों में अमेरिकन सामान की मांग कई कारणों से घटती जा रही थी । शासन की ओर से बड़ी उदारता से ऋण दिया जा रहा था जिससे लोग किश्तों में वस्तुएं खरीदते थे और सट्टे बाजारी बढ़ गई थी । ऋण की राशि कई मिलियन डालर बढ़ गई थी स्टॉक और सम्पत्ति का मूल्य उसके वास्तविक मूल्य से काफी अधिक बढ़ा दिये थे । इस कारण राष्ट्र की आर्थिक व्यवस्था खराब हो गयी थी ।

इस लम्बी व घातक आर्थिक नीति के संक्षिप्त कारण निम्न है-

1. तकनीकी विकास के कारण बहुत से लोग अपने कार्य से हाथ धो बैठे, इसको **तकनीकी बेरोजगारी** कहा जाता है और जब लोग बेरोजगार हो गये तो उनमें इतनी क्षमता नहीं थी कि वे उद्योगों में उत्पादित वस्तुओं को खरीद सके।

2. कुल राष्ट्रीय आय का एक छोटा सा भाग मजदूरों को मिलता था । वास्तविक वेतन अर्थात् वे वेतन जिससे वो कुछ खरीद सके, बहुत ही कम था इसलिए वेतन भोगी इतना सामान नहीं खरीद सकते थे जिससे कि कारखानों का काम चलता रहें । इसके अतिरिक्त बहुत से लोगों ने किस्तों पर हर चीज को क्रय करना शुरू कर दिया था और जब वे इसका भुगतान नहीं कर पाते थे तो किस्तों पर लिया गया सामान वापस ले लिया जाता था और पुन: बाजार में रख दिया जाता था ।

3. किसानों की क्रय शक्ति भी तेजी से संकुचित हो गई थी इसलिये वह भी कारखानों में तैयार सामान नहीं खरीद सकते थे।

17.4 आर्थिक मन्दी व उसके प्रभाव

मन्दी के चिन्ह तो 1929 की ग्रीष्म ऋतु से ही दिखाई देने लग गये थे । भवन निर्माण, इस्पात और मोटर के कारखानों से मजदूर हटाये जाने लग गये थे इसके बाद भी शेयर बाजार में धुआंधार सट्टेबाजी होती रही और दलाल धन कमाते रहे । फेडरल रिजर्व बोर्ड (Federal Reserve Board) ने शेयर की खरीद पर रोक लगाई तो बैंक के मालिकों ने न केवल निन्दा ही की बल्कि उसको मानने से इन्कार भी कर दिया 19 अक्टूबर, 1929 को स्टॉक रेट (Stock Rate) प्रकाष्टा पर पहुँच गई, 10 दिन बाद विपत्ति टूट पड़ी 1,65,000 शेयरों का क्रय-विक्रय हुआ । कुछ शेयरों का भाव तो 20 प्रतिशत घटा और कुछ को कोई खरीदने वाला ही न रहा । दो सप्ताह के बाद ही स्टाक का बाजार भाव 25 मिलियन डॉलर कम हो गया, सितम्बर 1929 में जिनकी कीमत 90 मिलियन डॉलर थी, जुलाई 1932 तक ये घटकर 15½ मिलियन रह गई थी । अत: व्यापारियों ने धन लगाना बंद कर दिया और उपभोक्ताओं ने सामान खरीदना कम कर दिया । अमेरिकी ऋण और क्रय संकुचन के कारण मन्दी का प्रसार यूरोप और लेटिन अमेरिका तक पहुँच गया । वहाँ भी आर्थिक व्यवस्था नष्ट हो गई और उसका प्रभाव संयुक्त राज्य पर भी पड़ा ।

1931-32 में बैंकों की दशा बहुत ही दयनीय हो गई उनकी समस्त सम्पत्ति और जमा खातों में संकट सूचक कमी आ गई, चारों ओर विसर्जन के चिन्ह झलकने लगे । अमेरिकी पूँजीवाद की जड़े हिल गई । जनवरी, 1933 में इतना आतंक फैला कि लोगों ने बैकों से अपना धन एकदम निकालना प्रारम्भ कर दिया । जब मांग भार को बैंक सम्भाल न सके तब अक्टूबर, 1932 में मेवादा के गर्वनर ने 12 दिन के लिए बैंक बन्द कर दिये । तदोपरान्त 4 फरवरी 1933 में लुई सियाना के बैंक, 14 फरवरी को मिचीगन के बैंक बन्द हो गये । इसी तरह इसके बाद दूसरे राज्यों के बैंक बन्द होने लगे और अन्त में 4 मार्च को न्यूयार्क का बैंक भी बन्द हो गया ।

इस प्रकार अमेरिका में व्यापार चौपट, बैंक दिवालिया, नगरों व ग्रामों में बेरोजगारी धनवान तथा निर्धन दोनों ही चिन्ताग्रस्त चारों दिशा में असन्तोष के काले बादल दिखाई दिये । इस विषम परिस्थिति से उबारने के लिये एक मसीहा की जरूरत थी सौभाग्य से जो मसीहा रूज़वेल्ट के रूप में आया, उसने निराशा को हटाकर लोगों के दिलों में आशा भरी, हतोत्साह के स्थान पर उत्साह सम्पन्न किया और भय की जगह दृढ़ता का संचार किया । उसने बड़े पते की बात यह कही कि- "सबसे बड़ा भय है, भय से डरना ।" इस भय को ही दूर करने के अभिप्राय से उसने अपने भाषण में कहा "मैं देश को एक नया सौदा दूँगा ।" और उसने अपने वचन को अक्षरश: निभाया ।

अमेरिका के इतिहास में रूज़वेल्ट का नाम न्यूडील से जुड़ा हुआ है यह एक चतुर्मुखी योजना थी जिसके अन्तर्गत राष्ट्रीय जीवन उत्थान के सभी पहलू आते हैं राष्ट्रपति ने पद ग्रहण करने के पश्चात् जो पहला प्रसारण राष्ट्र के नाम किया, उसमें उसने, कहा "बहुतात हमारी दहलीज पर है किन्तु बहुतात के होते हुए इसका दुरूपयोग बहुतात को जो लाभ हमें होना था

वह नहीं हुआ इसका मुख्य कारण स्वार्थी और धन के लोभी लोग थे । राष्ट्रपति ने गरीबों को राहत पहुँचाने का निश्चय किया, ऋण व उद्योगों में सन्तुलन पुन: स्थापित करने का अपना निश्चय किया और बैकिंग विधि पर निगरानी रखने का वादा किया । इसलिये के प्रशासन ने जो योजना बनाई उनको 3 शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है । (1) राहत (रिलीफ) (2) पुर्नस्थापना (रिकवरी) 3. सुधार (रिफोर्म) ।

पहले सौदे में रूज़वेल्ट ने रिलीफ व रिकवरी पर अपना ध्यान केन्द्रित किया । इस दृष्टि से न्यूडील कार्यक्रम को दो भाग में विभाजित किया जाता है । **प्रथम चरण**- 1933 से 1934 के अन्त तक और **दूसरा चरण** 1934 से 1939 तक ।

प्रथम सौ दिनों में राष्ट्रपति ने अमेरिकन जनता में विश्वास पुन: स्थापित किया । उसमें कांग्रेस को आमंत्रित करके प्रशासनिक सुधार स्वीकृत करने का आग्रह किया । जिसके अन्तर्गत बैंको में छुट्टी घोषित कर दी गई । Economy Act पारित किया गया जिसके द्वारा सट्टेबाजी पर नियन्त्रण लग गया । 1934 में सट्टेबाजी पर और भी कड़े प्रतिबन्ध लगाये गये । एक्सपैन्ज अधिनियम के अन्तर्गत एक आयोग भी गठित हुआ जिसका कर्तव्य था धोखाधड़ी व चालबाजी को रोकना । इसके बाद उसने "अलावों के किनारे की वार्ता" (Fire Side Chats) द्वारा जनता से अपील की कि वह बैंकों के प्रति अपनी निष्ठा प्रत्यापर्ण करे । इसकी तत्काल अनुक्रिया हुई । अप्रैल के प्रथम सप्ताह में जनता ने 1 करोड़ डॉलर बैंकों में पुन: जमा करवा दिया और जमाखोरों ने सोना भी वापस कर दिया । इससे संकटग्रस्त बैंकों को राहत मिली और उनका काम पूर्ववत् चलने लगा, किन्तु यह सुविधा केवल सुदृढ़ बैंकों को ही प्रदान की गई । सरकार ने 2,352 छोटे बैंकों को तो परिस्थापन कर दिया इन उपायों से थोड़े समय के लिये तो संकट स्थगित हो गया किन्तु एक समस्या अभी शेष रह गई थी वे थी आवास स्वामियों को आर्थिक सहायता देना उनके ऋणों को समचित करना और बंधक बाजार द्वारा संघ से सहायता देकर निजी मकान निर्माण को प्रोत्साहन देना । इन दोनों लक्ष्यों की पूर्ति भी की गई इस प्रकार बैंक भी पनपने लगे और लोक हित भी पूरा हुआ। साथ ही ये भी सोचा गया कि बाजार भाव को ऐसे स्तर पर लाना चाहिये जिससे कि किसानों-उत्पादकों और व्यापारियों को उचित लाभ प्राप्त हो सके तथा समाज तथा आय का सन्तुलित वितरण हो जाए, इस आशय की पूर्ति हेतु रूजवैल्ट ने जो उपाय सोचा वह था नियन्त्रित स्फीति। अत: 6 मार्च 1933 को स्वर्ण द्वारा मुद्रा भुगतान और स्वर्ण निर्यात की मनाही कर दी गई। तत्पश्चात् कांग्रेस ने स्वर्ण का राष्ट्रीयकरण कर दिया और ऐसी सरकारी व निजी कम्पनियों पर रोक लगा दी जिनके ऋण का भुगतान स्वर्ण के माध्यम से होता था। देश में तो स्वर्ण मानक का अन्त हो गया किन्तु मुद्रा समर्थन हेतु सीमित मात्रा में अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय स्वर्ण बुलियन द्वारा भुगतान की छूट दे दी गई।

न्यूडील के शत्रुओं ने इस व्यवस्था को समाजवादी कहना प्रारम्भ कर दिया जबकि न्यूडील का मुख्य उद्देश्य पूंजीवादी व्यवस्था को सुरक्षित रखना था।

17.5 न्यूडील योजना

राष्ट्रपति रूजवैल्ट और इसके परामर्शदाताओं ने जैसाकि पहले कहा जा चुका है तीन उद्देश्य तत्काल प्राप्त करने चाहे-

(1) उन लोगों को राहत पहुँचाई जाये जो मन्दी से पीड़ित थे।

(2) व्यापार व कृषि को पुन: स्थापित किया जाये।

(3) आर्थिक पद्धति में सुधार किये जाये। इस प्रकार रूजवैल्ट की न्यूडील योजना के तीन उद्देश्य थे जिनको इतिहासकार तीन आर (3R) का नाम देते थे यथा रिलीफ, रिकवरी और रिफोम (Relief Recovery and Reform)।

भूतपूर्व राष्ट्रपति हुवर ने इसमें चौथा 'आर' और जोड़ दिया है और वह है रिवेल्यूशन। निश्चित रूप से प्रारम्भ में न्यूडील अल्पकालीन राहत और पूर्व स्थापना के उपाय पर जोर देना था किन्तु शनै: शनै: कुछ साहसी और दूरगामी सुधार भी इसके अन्तर्गत किये गये। इसको समझाने के लिये जो कार्य इस योजना के अन्तर्गत किये गये और जो कानून बने वह निम्न प्रकार है-

Relief Recovery and Reform-

Emergency Banking Act, 1933 Tennessee Valley Authority, 1933
Economy Act, 1933 Federal Securities Act, 1933
Cicilian Conversation Glass-steagall Act, 1933
Corps, 1933 Gold Reserve Act, 1934
Federal Emergency Relief Reciprocal Trade Agreements
Administration, 1933 Act, 1934
Civil Works Administration, 1933 Public Utilities holding Company Act, 1935
National Recovery Administration, 1933 Social Security Act, 1935
Agricultural Adjustment National Labor Relations Act, 1935
Administration, 1933
Farm Credit Adminstration, 1933 Soil Conservation and Domestic allotment Act, 1936
Federal Housing Administration, 1934 National Housing Act, 1937
Works Progress Administration, 1935 Farm Security Administration, 1937
Fail Labour Standards Act, 1938

17.5.1 आपातकालीन राहत

राष्ट्रपति के सामने सर्वप्रथम कार्य लाखों बेरोजगार भूखों को भोजन उपलब्ध करवाना था। यद्यपि राष्ट्रपति इस सिद्धान्त में विश्वास करना था कि यह कार्य राज्यों व समाजों का है। फिर उसने यह सुझाव दिया कि संघीय शासन राज्यों को ऋण की बजाय अनुदान दें। कांग्रेस ने संघीय आपातकालीन राहत प्रशासक स्थापित किया और प्रारम्भ में इसके लिये 50 करोड़ डॉलर निर्धारित किया। हॉपकैंग को इसका संचालक नियुक्त किया, राहत कार्य को सफल बनाने हेतु एक अस्थाई राहत योजना प्रारम्भ करने के लिये सिवित कार्य प्रशासन स्थापित किया, इसके अन्तर्गत 40 लाख लोगों को लगाया गया, इससे क्रय शक्ति में वृद्धि हुई किन्तु इस योजना की कटु आलोचना के कारण कांग्रेस ने एक दूसरा संगठन बनाया, जिसे सिविल कन्जरवेशन कोर्ट (Civil Conservation Court) कहा जाता है। इसको 300 मिलियन डॉलर दिये गये। जिससे 2,50,000 नौजवान लोगों को काम पर लगाया जाये और अन्त में 5 लाख लोग इसमें लगाये गये रूजवैल्ट ने किसानों की राहत के लिये कृषि उधार प्रशासन स्थापित किया जिससे कि किसान उस भूमि को छुड़ा सके जो उन्होंने गिरवी रखा था।

बाजार भाव में मंदी के कारण किसानों में व्यापक असंतोष फैला हुआ था। एक उग्रवादी संस्था Farm-holiday Association भी संगठित हो गई और किसानों ने आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया इन्होंने मंडियों में अनाज पहुँचाने में रूकावटें डाली और हड़ताल की भी धमकी दी। राष्ट्रपति ने तुरन्त ही कदम उठाया ओर समस्त संघीय कृषि ऋणदायी संस्थाओं को एक करके फार्म क्रेडिट एसोसियेशन का निर्माण कर दिया। कांग्रेस ने जनवरी, 1934 में कृषि अक्षमता अधिनियम (Farm Bankrupty Act) पारित करके किसानों को इतनी राहत की व्यवस्था कर दी कि वे साधारण शर्तों पर अपनी सम्पत्ति को ऋण मुक्त करा सकते थे। इसी प्रकार संघीय भवन निर्माण प्रशासन स्थापित किया गया। इसके अन्तर्गत नये भवनों का निर्माण व पुराने भवनों की मरम्मत की गई।

पुनर्निर्माण वित्तीय निगम उद्योगों को ऋण देता रहा। कृषि के पुन: स्थापना के लिये एग्रीकलचरल एडजस्टमेंट एडमिनिस्ट्रेशन स्थापित किया गया। जिसके लिये लम्बे समय से किसान संघर्ष कर रहे थे और यह चाहते थे कि कृषि उपज का मूल्य बढ़ाने के लिये सरकार सहायता करे। इस प्रशासन के लिये जो धन जुटाया गया उसके लिये एक नया उपाय किया गया। वह यह कि उत्पादित माल की तैयारी पर कर लगाया गया तथा कुछ परिगणित वस्तुओं पर शुल्क लगाकर आय की व्यवस्था की गई।

1935 में कृषि विभाग को यह सूचना मिली कि फसले अत्यधिक प्रचुर होगी। अच्छी फसले हुई तो मण्डी भाव की तेजी को कायम रखना असम्भव हो गया और योजना नष्ट-भ्रष्ट होने लगी। अत: तत्काल उपाय किये गए और तीन कार्य किये गये। पहले तो अभिकर्ताओं को प्रमुख कृषि क्षेत्रों में भेजकर किसानों को इस बात पर राजी कर लिया कि वह कपास के उत्पादन क्षेत्र में तीन चौथाई की कमी कर दे, फिर दो लाख बीस हजार शुक्रो और 60 लाख शुक्रो की खरीद कर करवा डाली गई । संभवतया गेहूँ की फसल की यह दशा होती यदि प्रतिकूल मौसम की सूचना के कारण सरकार ने हाथ न खींच लिया होता, कपास का उत्पादन तो गिर

गया, उस पर नियंत्रण करने के उद्देश्य से कांग्रेस ने Bank Head Cotton control Act 1934 पारित किया । इसके उपरांत Agricultural Adjustment Act द्वारा प्रमुख वस्तुओं की उत्पादन की मात्रा निर्धारित करके किसानों से यह एग्रीमेंट लिखवा लिया कि वह इससे अधिक उत्पादन नहीं करेंगे। जो प्रक्रिया की जाती है उस पर टैक्स लिया जाये। उदाहरणार्थ गेहूँ की पिसाई पर टैक्स लिया जाता था। इससे निश्चित रूप से आटे व वस्तुओं का मूल्य बढ़ा और इसका प्रभाव उपभोक्ताओं पर पड़ा जबकि इसका लाभ बड़े हुए मूल्यों के कारण किसानों को मिला ।

17.5.2 उद्योगों का पुनः उद्धार

राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने उद्योगों की समस्या को भी शीघ्र ही हल करना चाहा । इसी अभिप्राय से उसने नेशनल रिकवरी एक्ट (1933) पारित किया । इस अधिनियम के तीन लक्ष्य थे-(1) घातक प्रतियोगिता की समाप्ति (2) उत्पादन को वास्तविक मान के अनुपात में इस स्तर तक लाना कि बाजार भाव में इतनी तेजी हो जाए कि उत्पादन वर्ग को उचित लाभ हो सके और (3) श्रमजीवियों के लिए प्रति सप्ताह काम के घण्टों व उचित मजदूरी दर का निर्णय करना । शासन की यह धारणा थी कि यदि सब व्यापार व उद्योग संचालक अपने-अपने उद्यम के लिये संहिताएं बना ले और उन पर अमल करना शुरू कर दे तो तीनों लक्ष्यों की पूर्ति स्वतः ही हो जाएगी । अतः संहिताओं का संकलन आरम्भ हुआ और अन्त में 557 आधारभूत संहिताओं को मान्यता भी दे दी गई । किन्तु इनसे बड़े व्यापारियों, उद्योगपतियों को मजदूरों की अपेक्षा कही अधिक लाभ हुआ और व्यापारियों को न्यास विरोधी नियमों के परिवर्तन से मुक्ति भी मिल गई । भाव निर्णय तथा क्रय में छोटे उत्पादकों के साथ भेदभाव सा व्यवहार किया जाने लगा अतः इन लोगों ने संहिताओं के विरोध में आवाज उठायी । इससे प्रभावित होकर एक नेशनल रिव्यू बोर्ड संगठित किया गया (प्रगति का निरीक्षण करने हेतु) किन्तु जब इससे भी कुछ काम न बना तब 1934 में National Industrial Recovery Board का संगठन किया किन्तु 1935 में सुप्रीम कोर्ट ने National Recovery Act को निषेध कर दिया ।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि संहिताओं के नियम विशेष रूप से बड़े व्यापारियों और उद्योगपतियों के पक्ष मे थे, फिर भी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूप से कुछ लाभ तो मजदूरों को पहुँचाने की आशा तो थी और लाभ प्राप्त भी हुआ । एक करोड़, तीस लाख मजदूरों के, लिए 40 घण्टे कार्य सप्ताह नियत हुआ और अन्य मजदूरों के लिए कार्य सप्ताह 53.3 घण्टों से 37.8 घण्टा हो गया । इस योजना के अन्तर्गत मजदूरों को 30 अथवा 40 सेन्ट/घण्टा मजदूरी निर्धारित की गयी । संहिताओं में बाल श्रम निरोधक और न्यूनतम मजदूरी दर की भी व्यवस्था थी । इन नियमों के कारण कारखानों में श्रमिकों की संख्या बढ़ने लगी । रिजवी अधिनियम द्वारा मजदूरों को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा झगड़ों के सामूहिक समझौते का अधिकार भी मिल गया । यह भी तय किया गया कि नौकरी देने से कोई भी कम्पनी अपनी यूनियन की सदस्यता की शर्त नहीं रखेगी । यह मजदूरों की महान उपलब्धि थी क्योंकि अब वे बिना शर्त के नौकरी पा सकते थे और सामूहिक संगठन करके अपने झगड़े तय करवा सकते थे।

इन झगड़ों की मध्यस्थता के लिए राष्ट्र श्रम समिति की स्थापना की गई, इसने अनेक झगड़े तय भी करवाए किन्तु जब 1934 की बसंत ऋतु में हड़तालों का तांता बढ़ गया तब राष्ट्रपति ने राष्ट्र श्रम समिति को समाप्त करके राष्ट्र श्रम सम्पर्क समिति संगठित की । यह तीन सदस्यों का एक आयोग था जो यूनियनों के सामूहिक समझौते के अधिकार निर्णय के चुनाव सम्पन्न करता था, किन्तु इस आयोग को कोई विशेष सफलता नहीं मिली।

17.5.3 'न्यू डील' के अन्तर्गत प्राकृतिक साधनों की सुरक्षा

कांग्रेस ने राष्ट्रपति के कार्यभार संभालने के एक महीने के भीतर ही Civilian Consevation Corps (3-c) स्थापित किया । इसका उद्देश्य दोहरा था, इसके द्वारा 25,000 नवयुवकों को काम पर लगाया गया और दूसरा, इसने वनों व भूमि को विनाश से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । सी. सी. ए की योजना बेरोजगारों को राहत पहुँचाने का एक आपातकालीन उपाय था किन्तु यह इतना लाभदायक सिद्ध हुआ कि द्वितीय विश्वयुद्ध तक चलता रहा ।

'न्यू डील' के समर्थक प्रारम्भ से ही उस स्थिति को ठीक करना चाहते थे जिसने आर्थिक मन्दी को लाने में सहायता की । उनकी नाराजगी, विशेष तौर से उन निजी व विद्युत शक्तियों से या जिन्होंने पूँजी नियोजकों को धोखा दिया व उपभोक्ताओं से ज्यादा धनराशि प्राप्त की, से थी । इस खराबी को दूर करने के लिये Tennessee River velley authoritiy स्थापित की गई । इसके अन्तर्गत रूजवेल्ट यह चाहता था कि विद्युत योजना पूर्णत: सरकार के नियन्त्रण में हो व सरकार द्वारा ही उसे चलाया जाये । उसकी सिफारिश पर कांग्रेस ने 1933 में Tennessee velley प्रति स्थापित किया ।

इसके उद्देश्य निम्नलिखित थे-

1. बेराजगारी को दूर करना
2. वनों की पुन: स्थापना करना
3. भूमि के कटाव को रोकना,
4. बाढ़ के नुकसान को कम करना ।
5. सिंचाई सुविधा को विकसित करना
6. सस्ती दर पर विद्युत उपलब्ध कराना
7. उन परिवारों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना जो बहुत ही दयनीय स्थिति में जीवन यापन कर रहे थे ।

1940 तक टी. वी. ए. (Tennessee velley Authority) ने सात बांध बनाये और सारी घाटी के जीवन स्तर को ऊँचा कर दिया । यह प्रगति की नई दिशा थी । इसमें प्रकृति से जूझना न था बल्कि उसके लाभदायक पहलुओं को समझकर उनका उपयोग करना था । यह योजना सारे विश्व के लिये पथ प्रदर्शक सिद्ध हुई तथा भारत ने भी वर्तमान युग में इसका अनुसरण किया जा रहा है।

17.5.4 मुद्रा और बैंकिंग-

न्यू डील योजना का ज्यादातर उद्देश्य मूल्यों को बढ़ाना था जिससे देश आर्थिक मन्दी से निकल सके । इसका एक उपाय उत्पादन में कमी करना था । यह कार्य कृषि के क्षेत्र में ए-ए-ए (Agricultural adjustment Act) कर रहे थे तथा उद्योग के क्षेत्र में एन. आर. ए. (National Recovery Act) दूसरा उपाय था सरकार अपने खर्चों के माध्यम से मुद्रा को प्रचलन में लाये । यह कार्य राहत योजना के अन्तर्गत किया गया था । एक उपाय और भी था, सैद्धान्तिक रूप से और वह यह कि मुद्रा में ऐसा फेरबदल किया जाये जिससे मुद्रा की मात्रा बढ़े । रूजवेल्ट के दो विश्वविद्यालयो के कृषक अर्थशास्त्रियों की यह मानना थी कि अगर सोने की कीमत बढ़ाई जावे तो मोटे अनुपात में अन्य वस्तुओं के मूल्य भी बढ़ जायेंगे । प्रशासन को केवल सोने की मात्रा खरीदनी होगी और डालर में सोने का तत्व कम करना होगा । किन्तु वित्त विभाग के अधिकारियों ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया इसलिये रूजवैल्ट ने फार्म क्रेडिट एडमिनस्ट्रेशन के अध्यक्ष से कहा कि वह प्रतिदिन गेहूँ जौ और छुआरों के साथ-साथ सोना भी खरीदे । रुजवेल्ट ने कांग्रेस की आलोचना में उत्तर देते हुए कहा कि मैं हमेशा स्वस्थ मुद्रा का समर्थक रहा हूँ और अभी भी समर्थन करता हूँ । परन्तु यह मुद्रा इतनी अस्वस्थ है कि एक डॉलर खरीदने के लिए बहुत सारी कृषि उपज देनी पड़ती है । इसलिये उसने जनवरी 1934 में डॉलर के सोने की मात्रा पहले की मात्रा के मुकाबले में 59.06 प्रतिशत निर्धारित कर दी । यद्यपि इसका तत्कालीन प्रभाव ज्यादा नहीं हुआ परन्तु शासन और अर्थव्यवस्था के संबंधों में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन आया ।

अन्य कानूनों के माध्यम से सरकार ने बैंकों पर नये-नये अधिकार प्राप्त किये । जिसमें ये अधिकार भी था कि बैंक कितना कर्जा दे इसकी निगरानी संघीय रिजर्व सिस्टम करेगा । जून, 1938 में रुजवेल्ट ने Glass Steagall Act पर हस्ताक्षर किये इसका उद्देश्य बैंकों द्वारा सट्टेबाजी पर अंकुश लगाना था । रुजवेल्ट के न चाहते हुए भी संघीय रिजर्व बीमा निगम की स्थापना हुई जिसमें 2,500 डालर की जमा की जमानत दी । इस निगम ने इतनी सफलता से कार्य किया कि अन्त में जमा की हुई 15,000 डालर तक धनराशि का भी बीमा किया गया । संघीय रिजर्व बीमा पद्धति में भी भारी परिवर्तन किये गये । उन तमाम दोषों को दूर करने की कोशिश की गई जो मन्दी के कारण उत्पन्न हो गये थे । यह कार्य 1935 के बैंकिंग एक्ट के माध्यम से किया गया जिसके अन्तर्गत सात सदस्यीय बोर्ड ऑफ गर्वनर की नियुक्ति की गई । इस बोर्ड को ब्याज दर पर प्रत्यक्ष अधिकार हासिल था । बोर्ड ने ब्याज की दर को कम किया इस प्रकार बोर्ड ने बैंकों से उधार लेने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया जिससे मुद्रा स्फीति आयी ।

बैंकों में पूँजी के नियोजन करने वालों की सुरक्षा के लिये कांग्रेस नें 1933 का Securities Act पारित किया, इसके अन्तर्गत निगमों से कहा गया कि वह नयी Security की मांग तभी कर सकते हैं जब वे संघीय ट्रेड आयोग में अपना पंजीकरण करवाये । जून 1934 में कांग्रेस ने एक नये कानून के माध्यम से सट्टे बाजार पर निगरानी रखने के उपाय किये । सटोरियों ने, जिन्होंने Wall Streeters में विरोध किया किन्तु इनकी शिकायतों का

प्रभाव उस समय बहुत कम हो गया, जब न्यूयार्क के एक सट्टे बाजार के अधिकारी को सजा हो गयी ।

17.5.5 रूजवेल्ट का बायीं ओर झुकाव

मूल रूप से रूजवेल्ट देश के सभी मुख्य आर्थिक व राजनैतिक घटकों का शुभ चिन्तक था किन्तु परिस्थितियों ने उसको मजबूर किया कि वह कृषकों, मजदूरों और विशेषाधिकार प्राप्तहीन लोगों के नये राजनैतिक घटक का शुभचिन्तक बने । रूजवेल्ट में जो ये परिवर्तन आया उसका एक कारण था कि रूजवेल्ट ने यह महसूस किया कि बड़े व्यापारी उसकी योजना को विफल बना रहे हैं और न्यूडील से राजनैतिक स्तर पर संघर्ष कर रहे हैं । उनके साथ 70 प्रतिशत अखबारों के प्रकाशक और अधिकांश वे लोग भी थे जो चुनाव कोष में अपना योगदान देते हैं । इसके अतिरिक्त सबसे ज्यादा धमकी वामपंथियों से भी मिली जिसके कारण उसकी न्यूडील योजना में धीरे-धीरे परिवर्तन आया । इस खतरे को कम करने के लिये रूजवेल्ट ने राजनैतिक यथार्थवाद और मानवीय भावना से काम लिया ।

17.5.6 दबाव की राजनीति

1934 में अमेरिकन बैन्क्रर्स एसोसिएशन को सम्बोधित करते हुए उसने कहा कि अब वक्त आ गया है कि उन सारी शक्तियों को एकजुट हो जाना चाहिये जो व्यापार की पुर्नस्थापना चाहते है। इस संघ में व्यापारी, साहूकार, कृषक, उद्योगपति, मजदूर और पूँजीपतियों को मिल जाना चाहिये । 1934 में कांग्रेस के चुनाव के समय दबाव और भी बढ़ा, जब रिपब्लिकन पार्टी ने सीनेट और कांग्रेंस में उस पर अतिरिक्त सीटें प्राप्त कर ली, केलीफोर्निया के एक वृद्ध चिकित्सक टाऊन-सन ने 50 लाख असहाय व्यक्तियों के लिये 200 डॉलर प्रतिमाह संघीय पेन्शन दिलाने की योजना बनाई । टाउनसन का कहना था कि वृद्ध व्यक्ति पेन्शन की धनराशि उसी महीने खर्च कर देते है, जिस महीने में उन्हें पेन्शन मिलती है तो इससे मुद्रा का चलन बढ़ेगा और मन्दी का अन्त हो जायेगा । परिणाम यह निकला की लगभग 10 लाख डालर 2 साल में एकत्रित कर लिये और इतने ही मतों का वोट बैंक ने भी हासिल कर लिया, किसी प्रकार राजनैतिक दबाव रूजवेल्ट पर आया और उसने एक नारी को लेबर सैकेट्री के रूप में अपना पहला नारी मंत्री बनाया, रूजवेल्ट ने यह घोषणा भी की कि वह Social Security योजना का समर्थन करेगा ।

1935 Social Security Act के माध्यम से वृद्धों को दो प्रकार की सहायता प्रदान की गई । जो लोग असहाय थे उनको 15 डॉलर प्रतिमाह संघीय सहायता दी गई इतनी ही बराबर की धनराशि राज्यों को भी दी गई और जो लोग काम कर रहे थे उनको अवकाश ग्रहण करने पर सहायता दी गई । वे सहायता उस कोष से दी गई जो उनकी आय पर टैक्सों के द्वारा और उनके नौकर रखनेवालों ने उनके फण्ड में जमा करायें, 1942 में वह धन राशि 10 डालर से 85 डालर प्रतिमाह तक कर दी । इसी कानून के अन्तर्गत बेरोजगारों को बेरोजगारी बीमा, अन्यों, विकलांगों को सहायता और निर्भर माताओं व बच्चों को अनुदान मिलता था । इस

सबकी व्यवस्था राज्यों को करनी पड़ती थी Social Security Force इसकी देखभाल करता था। 1935 में सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत बेरोजगारों की सहायता हेतु 50 करोड़ डॉलर मन्जूर किये गये यह कार्य Work Progress Administration के अन्तर्गत किया गया । इसके अन्तर्गत 21 लाख लोगों को 1935 से 1945 तक विभिन्न योजनाओं में लगाया गया इसके अन्तर्गत 600 Air Ports बने और 1,10,000 सार्वजनिक भवन कों निर्माण व 5,00,000 गन्दे पानी की निकासी के लिये सीविर लाईनें डाली गई ।

कला, संगीत और नाटक के क्षेत्र में देश के योग्य व्यक्तियों को हर प्रकार के अवसर प्रदान किये गये । 16-25 साल के आयु के नौजवानों को W.P.A [Works Progress Administration] के माध्यम से सहायता मिली जिसमें से हर आठ में से सात नौजवान लोग स्कूल व कॉलेज में शिक्षा ग्रहण कर रहे थे ।

मजदूरों के परिवारों के लिये अच्छी आवासीय व्यवस्था की गई और अमेरिका के सबसे बदनाम फुटपाथों के स्थान पर ऐसे भवन बने जिनमें 22,000 परिवार रहते थे । किन्तु इन मकानों का किराया इतना ज्यादा था कि Slums में रहने वाले लोग भुगतान नहीं कर सकते थे । 1937 में Wanger Act पारित किया गया जिसमें भवन निर्माण की 511 परियोजनाएं अपने हाथ में ली । इसके अन्तर्गत 1,61,000 आवासीय भवन गरीबों के लिये बनाये जाने थे और इनमें से 1/3 आवास अमेरिका के नीग्रो लोगों को मिले ।

17.5.7 लेबर यूनियन को प्रोत्साहित करना-

वे भाग्यशाली जो सरकारी नौकरियों में थे उन पर भी रूजवेल्ट की पैतृक योजना लाभदायक हुई । इस कार्यक्रम के अन्तर्गत रूजवेल्ट ने लोगों को वेतन और कार्य अवधि की जमानत दी और सभी सामाजिक सुरक्षाओं के लाभ उनको प्राप्त थे । यूनियन के नेता मजदूरों के लिये यह सुविधाएं सामूहिक सौदेबाजी से प्राप्त करना चाहते थे इसलिये वे लोग अपनी मांगों के लिये सरकार की तरफ न देखकर थे । यूनियन की तरफ देखने थे न्यूडील से पहले ही उनको यह सुविधा मिल चुकी थी जो वो चाहते थे । उदाहरण के लिये न्यायालय मजदूरों और उनके मालिकों के बीच हस्तक्षेप नहीं कर सकते थे । किन्तु आर्थिक मन्दी के वर्षों में कारखानों के मालिक साधारणतया संघ से अधिक शक्तिशाली हो गये थे । हड़तालें आर्थिक पुर्नत्थान में बाधाएं उत्पन्न करती थी । अत: 1933 में यह कानून पारित किया गया कि मजदूर अपने मालिकों से सौदेबाजी कर सकते है और राष्ट्रीय मजदूर बोर्ड इसकी देखरेख करेगा ।

रूजवेल्ट मजदूर नेताओं के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाने का इच्छुक था किन्तु वह सामूहिक सौदेबाजी की दृढ़ता से जमानत देने को तैयार नहीं था । इसलिये उसने न चाहते हुए भी 1935 में Wagner Act को स्वीकृति प्रदान की जिसके अन्तर्गत कारखानों के मालिकों को निम्न लिखित कार्य करने से रोका गया-

1. मजदूरों के स्वयं संगठन बनाने में मिल मालिक हस्तक्षेप नहीं करेंगे ।
2. मजदूर संगठनों के प्रशासन पर किसी प्रकार का दबाव नही डालेंगे ।
3. नौकरी की अवधि में किसी प्रकार का भेदभाव नही करेंगे ।

इस काम की देखभाल के लिये National Labour Relation Board स्थापित किया गया, जो कारखानों पर निगरानी रखता था । इस एक्ट के कारण शक्तिशाली यूनियन बनने लगी इसलिये उद्योगों ने भी अपने संगठन बनाये और उन्होंने यूनियन का विरोध करना प्रारम्भ किया । राष्ट्रपति रूजवैल्ट और कुछ दूसरे औद्योगिक नेता उद्योगों की ही यूनियन बनाना चाहते थे । किन्तु इसके लिये बहुत ही संघर्ष की आवश्यकता थी और संगठित मजदूर यूनियन की संख्या निरन्तर बढ़ती रही । 1935 मे यूनियन की सदस्य संख्या 4.2 मिलियन से बढ़कर 1941 में 9.5 मिलियन हो गई ।

जनवरी 1936 में सुप्रीम कोर्ट नें ए-ए-ए को अवैधानिक घोषित कर दिया क्योंकि उच्चतम न्यायालय ने उसके द्वारा कृषि उत्पादन और इस लक्ष्य के लिये कर लगाने संबंधित नियमों को अवैधानिक घोषित कर दिया था । कांग्रेस ने शीघ्र ही एक कानून पारित किया जो Soil Conservation and Domestic Allotment Act कहा जाता है । इससे न्यायालय की आपत्तियों को दूर किया गया । इस नये कानून के अन्तर्गत कांग्रेस ने उन किसानों को धन देने की व्यवस्था की जो अपनी भूमि को रिक्त रखते है जिससे कि भूमि की उर्वरा शक्ति सुरक्षित रहे । किन्तु इस युग के बाद कृषि उत्पादन में तकनीकी का उपयोग और संकरण बीज के कारण उत्पादन बढ़ा । इसलिये 1938 में दूसरा ए-ए-ए एक्ट पारित किया गया जिसने उत्पादन में कमी के नये उपाय पारित किये गये । जैसे भूमि को सुरक्षित रखने का भुगतान, बाजार कोटा, निर्यात पर सहायता और फसल पर ऋण पाँच ऐसी कृषि उपज जो नष्ट नही होने वाली होती थी अनाज भण्डार में रखा जाता था। उन पर किसान संघीय ऋण ले सकते थे और ये भण्डार तभी खोला जाता था जब कृषि मूल्य बड़े हुए हो ये वही भण्डार है जो द्वितीय विश्वयुद्ध में मित्र देशों की खाने-पीने की आवश्यकता' को पूरा करने में सहायक सिद्ध हुए। 1938 में एक Surplus Marketing Administration स्थापित किया गया जिसके अन्तर्गत अतिरिक्त भोजन उन लोगों को उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई जिनको आवश्यकता थी और स्कूलों में LUNCH की व्यवस्था की गई गरीब किसानों की सहायता के लिये जो ऐसी भूमि पर काम करते थे जो अच्छी नहीं थी। उनको अच्छी भूमि पर बसने के लिये सहायता की Resettlement Administraton 1935 of Farm Security Administration के अन्तर्गत पुन: बसने के लिये अल्पकालीन ऋण व नये खेत खरीदने के लिये दीर्घकालीन ऋण दिये गये। Rural Electrification Administration के माध्यम से भाग्यशाली किसानों को विद्युत कनेक्शन का लाभ मिला । 1925 तक केवल 4 प्रतिशत किसान ही लाभ उठा सकते थे। 1940 तक 25 प्रतिशत खेतों को इसका लाभ पहुँचा।

17.5.8 बड़े व्यापार (Big Business)-

जब उच्चतम न्यायालय N.R.A. [National Recovery Act] को अवैधानिक घोषित कर दिया तो इस एक्ट की कुछ धाराओं को संशोधित रूप में पुन: पारित किया गया। फरवरी, 1935 में उच्चतम न्यायालय ने इस कानून को अवैध घोषित कर दिया इसके अन्तर्गत तेल के अधिक उत्पादन पर रोक लगाई गई थी। इस पर कांग्रेंस ने एक एक्ट पारित किया जिसके

अन्तर्गत हाट ऑयल को बाहर भेजने पर प्रतिबन्ध लगा दिया (राज्य सीमाओं से अधिक उत्पादन किया हुआ तेल)। अगस्त, 1935 में एक एक्ट के द्वारा कोयले की कीमत निर्धारित की गई, उत्पादन सीमित किया गया तो उच्च न्यायालय ने इसको भी अवैध घोषित कर दिया।

कांग्रेस ने 1937 में उपरोक्त कानून पुन: पारित किया। 1936 के कानून के द्वारा लघुत्तम मजदूरी और अधिकतम कार्य अवधि निर्धारित की गई। बड़े-बड़े व्यापारियों पर नियंत्रण स्थापित करने के लिये नियमों को कठोर बनाया गया।

रूजवेल्ट ने संघीय कर पद्धति में भी परिवर्तन किया। रूढ़िवादी अखबारों ने इस प्रस्ताव का यह कह कर विरोध किया कि यह धनवानों को चूसने का प्रस्ताव है। इस प्रकार रूजवेल्ट की धनवान वर्ग के लोगों ने बहुत आलोचना की।

17.6 1936 का चुनाव-

अमेरिका के लाखों लोग यह सोचते है कि न्यूडील के अन्तर्गत उनकी व्यक्तिगत स्थिति में सुधार आया है। दक्षिण पन्थियों की आलोचना और उनका यह नारा कि रूजवेल्ट के सुधारों से धनवानों को चूसा जा रहा है, ने लोगों को यह विश्वास दिला दिया कि रूजवेल्ट उनका मित्र है। इस चुनाव में रूजवेल्ट को 2 करोड़, 74 लाख, 77 हजार वोट प्राप्त हुए। जबकि उसके प्रतिद्वन्दी को 1 करोड़ 66 लाख, 80 हजार वोट प्राप्त हुए। पूंजीपति कोल एक्ट, Holding Company act, National labour relation का खुल्लम खुल्ला उल्लंघन कर रहे थे कि उच्चतम न्यायालय उन्हें अवैध घोषित कर देगा। जिस प्रकार उसने W.R.A., A.A.A को अवैध घोषित कर दिया था। उच्चतम न्यायालय ने संघीय सत्ता की संकीर्ण व्याख्या करके और 14वे संशोधन में व्यापक व्याख्या करके यह धारण बना ली थी कि आर्थिक क्षेत्र में न तो संघीय और न ही राज्यों में कानून बनाने का कोई अधिकार प्राप्त हो। न्यायालय के आलोचक इस बात पर दबाव डाल रहे थे कि कुछ इस प्रकार का संवैधानिक संशोधन किया जाए जिससे आर्थिक क्षेत्र में संघीय शासन को, ज्यादा अधिकार प्राप्त हो ।

रूजवेल्ट का मत था कि संविधान ने प्राप्त अधिकार दे रखे है । जो गलती है वो यह है कि न्यायालय उसकी रूढ़िवादी व्याख्या कर रहा है । चार-पांच न्यायाधीश दृढ़ता से न्यू डील का विरोध करते थे । वह पूर्णत : स्वस्थ थे और उनका त्याग पत्र देने का इरादा भी नहीं था । परिणाम स्वरूप रूजवेल्ट ने सर्वोच्च न्यायालय मैं नए न्यायाधीशों की अवकाश प्राप्त होने वाले न्यायाधीशों के स्थान पर नियुक्ति करनी चाही । यह न्यायाधीश संभवतया ऐसे थे जो रूजवेल्ट के विचारों से सहमत थे ।

इस बिन्दु पर रूजवेल्ट की राजनैतिक सूझबूझ ने उसने यह इरादा छोड़ दिया और अपने प्रस्ताव स्पष्ट व दृढ़ता के साथ रखने के स्थान पर उसने आपने प्रस्तावों को एक बड़ी योजना का अंग बना लिया ।

उसने कांग्रेस के नेताओं को अग्रिम सूचना दिए बिना ही फरवरी, 1937 में एक संदेश भेजा जिसके अन्तर्गत उसने संघीय न्याय व्यवस्था की उथल-पुथल की आवश्यकता पर जोर दिया और नए न्यायाधीशों की नियुक्ति का प्रस्ताव किया । उसने इतना अवश्य स्वीकार किया कि

नये रक्त के कारण न्यायालयों में नव जीवन आएगा और वह बदलते हुए संसार की आवश्यकताओं और तथ्यों को पूरा करने में सहायता करेंगे ।

रूजवेल्ट के प्रस्ताव में कोई संवैधानिक उलझन नहीं थी क्योंकि कांग्रेस उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्तियों की संख्या में परिवर्तन करती रहती थी । किन्तु फिर भी रूजवेल्ट की योजना ने सारे देश में एक तूफान खड़ा कर दिया । बहुत से विचारक जो अब तक रूजवेल्ट के समर्थक माने जाते थे रूढ़िवादियों की इस चेतावनी पर उन्होंने ध्यान दिया कि इसी प्रकार के हथकण्डों सें तानाशाह सत्ता में आते है । कांग्रेस में भी विवाद दलीय सीमाओं को पार कर गया। दक्षिण के डेमोक्रेट सदस्य रिपब्लिकन के साथ मिल गए । रूजवेल्ट ने ऐसे सदस्यों को दल का अनुशासन भंग करने पर चेतावनी दी । वह एक समझौते का उपाय प्राप्त करने में सफल हो सकता था । किन्तु उच्चतम न्यायालय ने ही इसकी आवश्यकता समाप्त कर दी ।

राष्ट्रपति के द्वारा अपनी योजना कांग्रेस को भेजने से पूर्व ही मुकदमों में 572 के बहुमत से ही संविधान की उदार व्याख्या करते हुए वह कानून वैध घोषित कर दिया जिसके अन्तर्गत राज्य द्वारा लघुत्तम मजदूरी तय की गई थी । गतवर्ष इसी तरह के कानून को 5-4 के निर्णय के द्वारा अवैध घोषित कर दिया गया था । यह निर्णय 29 मार्च, 1937 को दिया गया । दो सप्ताह बाद उच्चतम न्यायालय ने Wagner Act और मई, 1937 में Social Security Act को भी वैध घोषित कर दिया । इस प्रकार रूजवेल्ट की योजना को लागू करने का अब कोई औचित्य ही नहीं रहा और कांग्रेस ने इस योजना को अस्वीकार भी कर दिया । किन्तु यह रूजवेल्ट व न्यू डील की महत्वपूर्ण विजय थी क्योंकि अब उच्चतम न्यायालय ने संविधान की उदार व्याख्या करना शुरू कर दिया था । इसी बीच एक के बाद दूसरे वृद्ध न्यायाधीश अवकाश ग्रहण करते रहे और रूजवेल्ट नें उनके रिक्त स्थानों पर एक के बाद एक ऐसे लोगों की नियुक्ति की जो संविधान की उदार व्याख्या करे । यद्यपि न्यायाधीशों में आपस में काफी विवाद था किन्तु साधारणत: यह विवाद तकनीकी मामलों तक ही सीमित था । मुख्य तौर से उन्होंने व्यापार व कर सम्बन्धित धाराओं की उदार व्याख्या की, और चौदहवें संशोधन की इतनी विस्तृत व्याख्या की कि अब संघ व राज्य सरकारों को आर्थिक नियम बनाने में कोई भी बाधा नहीं रही। और इस प्रकार आर्थिक ढांचे में सुधार करने के लिये जो भी संवैधानिक रूकावटें थी वे लगभग दूर हो गई।

17.7 पुर्नरूत्थान व गिरावट-

1937 से ही तेजी से गिरावट प्रारम्भ हुई और बहुत से अर्थ शास्त्री इस बात का भय भी कर रहे थे कि मुद्रा स्फीति शीघ्र ही काबू सें बाहर हो जायेगी। इससे पूर्व आश्चर्यचकित उन्नति हुई थी। राष्ट्रीय आय जो 1929 में 82 मिलियन डालर थी घट कर 1932 में 40 मिलियन डालर हो गई और अब वह लगभग 72 बिलियन डालर हो गई थी। फिर भी 7.5 मिलियन लोग अभी भी बेरोजगार थे और लगभग 4.5 मिलियन परिवार सरकारी राहत पर जीवन बिताते थे। पूंजी के नियोजन व व्यापार के विकास में कोई खास उन्नति नहीं हुई थी जितनी कि 19वीं शताब्दी के दूसरे दशक में।

उत्थान अवश्य हुआ किन्तु इसका कारण राहत कार्यों पर किये जाने वाला अपार धन था इसके अलावा सार्वजनिक निर्माण कार्य योजना, कृषकों को ऋण, इत्यादि के कारण ये परिणाम निकलें थे। इस प्रकार सरकारी खर्च ने अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया था। इस अनुभव से नये आर्थिक सिद्धान्तों का उदय हुआ और वे ये कि राष्ट्र को आर्थिक मन्दी से निकालने के लिये सरकार को उदारता से खर्च करना चाहिये। इसका दूसरा अर्थ यह भी था कि मुद्रास्फीति को रोकने के लिये शासन की ओर से प्रतिबन्धात्मक नीतियां सहायक सिद्ध हो सकती हैं। ये नई आर्थिक सिद्धान्त की कीयनिज़्म (Keynesuism) के नाम से प्रसिद्ध हुये ये नाम प्रसिद्ध ब्रिटिश अर्थशास्त्री कीयंस (Keynes)के नाम से दिया गया।

1937 में रूजवेल्ट और उसके आलोचक घाटे के बजट से डरते थे। इस बात से चिन्तित थे कि राष्ट्रीय ऋृण बढ़ते बढ़ते 30 मिलियन डालर हो गया था। रूजवैल्ट को यह भय था कि कहीं 1929 जैसी दयनीय स्थिति पैदा न हो जाये इसलिये उसने फैडरल रिजर्व बैंक द्वारा दिये जाने वाले कर्जे की सुविधा को कठोर बताया। बजट को संतुलित करने के लिये सरकारी खर्चे में कमी की। जनवरी व अगस्त, 1937 के बीच W.P.A. Programme उसने आधा कर दिया इस प्रकार 1.5 मिलियन मजदूरों को अवैतनिक अवकाश दे दिया।

सूखे के अन्त के बाद कृषि उपज में बढ़ोत्तरी अवश्यम्भावी थी और इस कारण कृषि मूल्यों में तेजी से गिरावट आयी और इस प्रकार कच्चे धागे, पर स्थित नयी विकास गति दृढ़ हो गई। उत्पादन का इन्डेक्स जो अगस्त, 1937 में 117 था वह घटकर मई, 1938 में 76 हो गया, 4 मिलियन अतिरिक्त मजदूरों को बेरोजगारी का सामना करना पड़ा और ऐसा लगा कि स्थिति वैसी ही हो जायेगी जो 1932 में थी।

अक्टूबर, 1937 में राष्ट्रपति ने कांग्रेस का विशेष अधिवेशन बुलाया जिससे कि सार्वजनिक खर्चे को पुन: बढ़ाया जाये और स्वार्थी तत्वों में सुधार किया जाये जो इस घाटे के लिये उसके द्वारा उत्तरदायी माने गये थे। कांग्रेस ने आपातकालीन 5 बिलियन डालर की मंजूरी दे दी। सार्वजनिक निर्माण कार्य और राहत योजनाओं के द्वारा पुन: बड़ी धनराशि आर्थिक उन्नति के लिये लगाई गई। जून, 1938 में Recovery का मार्ग प्रशस्त हो गया, और इस प्रकार आर्थिक संकट के खतरे को सरकार ने टाल दिया। सरकारी कर्मचारियों की संख्या 1931 में 5 लाख 88 हजार थी वह बढ़कर 13,70,000 हो गई (1941) 1938 के अन्त तक न्यूडील योजना अपनी सीमा तक पहुंच गई थी और उसी समय द्वितीय विश्वयुद्ध का खतरा घरेलू समस्याओं पर छाने लगा।

17.8 समीक्षा

न्यू डील के स्वरूप को लेकर इतिहासकारों में सहमति नहीं है। भूतपूर्व राप्ट्रपति 'हुवर' (Hoover) ने आलोचना करते हुए एक बार कहा कि न्यूडील के समर्थक तीन आर की बात करते है (Relif,Recovery,Reform) किन्तु गुप्त रूप से वे 'आर' के समर्थक है और वह है।Revolution वस्तुत: न्यू डील किस प्रकार से क्रान्तिकारी था किस सीमा तक इसमें अमेरिका के भूतकाल से नाता तोड़ लिया था, इतिहासकारों ने इन प्रश्नों के भिन्न-भिन्न उत्तर दिये हैं।

कुछ लेखकों की यह मान्यता है कि न्यू डील क्रान्तिकारी ना होकर Evolutionary (विकासवादी) था। वस्तुत: यह प्रगतिशील आन्दोलन का विस्तार ही था। Basil Ramel ने अपनी पुस्तक "The history of New Deal" को दो भागों में विभाजित किया है और दोनों में अन्तर बताया है।

(1)1933 से 1935 की न्यू डील प्लानिंग रूढ़िवादी और पुनर्रूत्थान पर केन्द्रिन थी और यही उसका मुख्य उद्देश्य था। इसके अन्तर्गत बड़े-बड़े व्यापारियों व बड़े-बड़े कृषक फार्मों को अधिकतर सहायता प्रदान की गई। दूसरा भाग 1935 सें 1938 तक का है जिसमें अपेक्षाकृत उदारता और सुधार की ओर अधिक ध्यान दिया गया और इसके अन्तर्गत औद्योगिक मजदूरों को व छोटे किसानों को अधिक लाभ पहुंचाया। Erice, F, Goldenmen ने अपनी पुस्तक "The Rendezvous with Distiny (1952) में लिखा कि "न्यू डील का प्रथम चरण वैसा ही था जैसाकि Theodore Roosevelt का नया राष्ट्रवाद और दूसरा चरण हमें वुडरो विल्सन के नव स्वतन्त्रतावाद का स्मरण करवाता है। Goldmen इस बात को स्वीकार करता है कि न्यू डील की उदारवाद में समाज सुरक्षा जैसे, उपाय भी थे जिसका कोई उदाहरण नहीं मिलता है। किन्तु William E.Leachtenburng ने "Frenklin D.Ressevelt and the New Deal" (1932-1940) (1963) में यह लिखा कि Roosevelt के वामपंथी झुकाव की सीमा को अतिश्योक्तिपूर्ण बतलाया गया। अन्य लेखक न्यू डील में परिवर्तनों के तत्वों पर निरन्तरता के स्थान पर अधिक जोर देते है। Richard Hotstdtes ने "The Age of Reform" (1955) में स्वीकार किया कि प्रगतिवाद सें निरन्तरता बनी हुई थी। किन्तु सामूहिक रूप से रूजवेल्ट की योजना एक भारी नई व्यवस्था थी और उससे बिल्कुल भिन्न थी जो अब तक संयुक्त राज्य अमेरिका में हो चुका था। इसी लेखक नें इस बिन्दु पर भी जोर दिया कि बहुत से पुराने प्रगतिवादी जो 1930 के दशक में जिन्दा थे, न्यू डील का विरोध करते थे। Car N. Degler ने अपनी पुस्तक Out of Our Part (1959) में न्यू डील को अमेरिका की तीसरी क्रान्ति कहा (प्रथम दो क्रान्तियां थी, 1776 में क्रान्ति व गृह युद्ध) और यह टिप्पणी भी की कि न्यू डील अमेरिका के इतिहास की एक विभाजन रेखा है और ऐसा विदित होता है कि अब पीछे मुड़कर नहीं देखा जाएगा।

उपरोक्त इतिहासकार अपने आपको उदारवादी समझते थे और कुछ दृष्टि से आलोचक भी थे। फिर भी मूलभूत उनकी सहानुभूति रूजवेल्ट व उसकी योजना के प्रति थी। एक रूढ़िवादी रूजवेल्ट विरोधी इतिहासकार Edgar E. Robinson अपनी पुस्तक The Roosevelt Leadership 19331-45 (1955) में न्यू डील को भूतकाल सें बिल्कुल अलग मानता है और इसकी निंदा करता है। लेखक को इस बात की शिकायत है कि रूजवेल्ट जो क्रांतिकारी परिवर्तन का प्रवक्ता था उसने देश को उस तरफ मोड़ दिया जहां पर साम्यवाद के प्राथमिक तत्त्व दृष्टिगोचर होते है।

1960 के दशक के नौजवान क्रान्तिकारी इससे बिल्कुल भिन्न मत व्यक्त करते है । अपनी पीढ़ी की वे समस्याएं जिनका आज तक समाधान नहीं हुआ है से प्रभावित होकर न्यू डील की आलोचना करते है और यह बताते है कि पूंजीवाद की बहुत सी बुराईयां इस योजना के

अन्तर्गत सुरक्षित रह गई है । लाखों लोग, व्यापारी, व्यावसायिक, मजदूर यूनियन के नेता, व्यापारिक कृषक को बड़ी सहायता मिली, वामपंथी इतिहासकार Haward Zinn ने 'New Deal Thought (1966) की प्रस्तावना में लिखा 'लाखों लोग Sharecroppers, गंदी बस्तियों में रहने वाले उत्तर व दक्षिण के नीग्रो, बेरोजगार, अभी भी वास्तविक नये सौदे की प्रतीक्षा कर रहे थे ।

विद्वानों के उपरोक्त मतों से यह विदित होता है कि न्यू डील के गुणों व दोषों को लेकर इतिहासकारों में भिन्न-भिन्न मत है । इतिहासकार पारकिंस इन गुण दोषों पर विस्तार से चर्चा की है । उसका कहना है कि न्यू डील ने क्या प्राप्त किया?

इसका मुख्य उद्देश्य रोजगार व उत्पादन को पूर्णत: पुन: स्थापित करना था । निश्चित रूप से इसमें यह असफल रहा । यहां तक कि 1937 में जो न्यू डील की चरम सीमा का वर्ष माना जाता है । 75 लाख लोग बेरोजगार थे और राष्ट्रीय उत्पादन केवल $ 71, 853, 000, 000 तक पहुंचा था । जबकि 1929 के आकड़े में $ 82, 691, 000, 000 । जबकि उपभोक्ता की वस्तुएं उत्पादित करने वालें उद्योगों की पुन. स्थापना हुई लेकिन बहुत कम नई पूंजी का नियोजन हुआ । जब तक निजी नियोजक अपनी बात को प्रचलन में लाते थे । किन्तु अब यह काम शासन ने अपने हाथ में ले लिया था और जब शासन ने अपने खर्चे में कटौती की जैसा कि 1937 में हुआ तो फिर घाटे (Recession) का दौर प्रारम्भ हो गया ।

न्यू डील के आलोचकों का कहना है कि इसका कारण शासन की भूल थी । शासन ने निजी पूंजी नियोजकों पर आक्रमण किए, नौकरशाही नियम कठोर किए, राष्ट्रीय ऋण बढ़ाया, मजदूरों में कई प्रकार की सुविधाएं दी । इन सबने अनिश्चितता की ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जिसमें व्यापार का विस्तार असंभव हो गया । इसके विपरीत प्रगतिवादियों का कहना है कि न्यू डील असफल रहा क्योंकि इसके अन्तर्गत जितना कुछ किया जाना था वो पर्याप्त नही था ।

न्यू डील के आलोचक व समर्थक कभी-कभी इसको क्रांतिकारी बतातें है जो कि अतिश्योक्ति है । न्यू डील ने केवल दो ही साधारण परिवर्तन किए-एक कृषक व मजदूरों को प्रत्यक्ष संरक्षण प्रदान किया । दूसरा संघीय शासन को देश की अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने में विशेष उत्तरदायित्व मिल गया । परन्तु इसमें कुछ खतरे भी निश्चित थे । बड़ा कृषक वर्ग और बड़ा मजदूर वर्ग जनता का शोषण भी कर सकता था । सरकारी अधिकारी अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए अपने अधिकारों का दुरुपयोग भी कर सकते थे । न्यू डील योजना का मूल आधार यह था कि अधिकांश अमेरिकन लोग यह विश्वास करते थे कि 1920 के दशक में जो असीमित निजी पूंजी नियोजन था उसनें पर्याप्त मात्रा में साधारण खुशहाली को विकसित नहीं किया । यद्यपि न्यू डील ने खुशहाली पुन: स्थापित तो नहीं की किन्तु उसने सार्वजनिक मामलों में एक नई रूह फूंक दी । इसने अमेरिकन्स का नैतिक मनोबल पुन: स्थापित किया इसके द्वारा इस बात पर जोर दिया गया कि शासन भूखे मरते लोगों के लिए काम तलाश करे । इसने निराशा को आशा में बदल दिया । इसके द्वारा सार्वजनिक निर्माण के काम किए गए । इसने राष्ट्रीय विरासत में अतुल्य वृद्धि की । संभवतया न्यू डील में सबसे ज्यादा संतोषजनक उपलब्धि प्रत्यक्ष रूप से पुनर्वृद्धि के विकास में न हो कर अन्य गतिविधियों में थी जैसे-कृषि

उत्पादन बढ़ा, शेयर बाजार में नियंत्रित सट्टेबाजी की उन्नति हुई और ऋण प्रतिबंध के फलस्वरूप संघ के व्यय में कमी हुई। मन्दी के पुनरागमन को रोकने के लिए कृषि अधिनियमों में संशोधन किया गया, बालश्रम प्रथा को निरस्त किया गया, निम्नतम मजदूरी दर और अधिकतम काम के घण्टे निश्चित किए गए तथा भाव-निर्णय के एकाधिकार को तोड़ने के लिए न्यास-विरोधी कानूनों को संशोधित किया गया । कांग्रेस में राष्ट्रपति के इस संदेश को कि "यदि निजी शक्ति को इतना बढ़ने दिया गया कि वह लोकतांत्रिक राज्य से ही अधिक हो जाए, तो लोकतंत्र खतरे में पड़ जाएगा" बड़े आदर और ध्यान से सुना गया । उस पर कार्यवाही होने ही वाली थी कि दूसरे महायुद्ध की बला सिर पर मंडराने लगी । प्रगति स्थगित हो गई । फिर भी राष्ट्रपति रूजवेल्ट की उपब्धियां प्रशंसनीय है ।

17.9 न्यूडील योजना की समीक्षा

Marshall Smelser ने अपनी पुस्तक "American History at a Glance" में न्यू डील के दोष व गुण इस प्रकार से बताए-

1. इस योजना के अनतर्गत राज्य और स्थानीय शासन के मुकाबले में केन्द्रीय नौकरशाही के हाथ में सत्ता का केन्द्रीयकरण किया गया और अमेरिकन जीवन के उस क्षेत्र में भी इसने अतिक्रमण किया जो अब तक कानून की परिधि से स्वतंत्र माने जाते थे ।

2. इसने वर्ग भेद भी उत्पन्न किया । संगठित वर्ग को बहुत ही शरारती बना दिया क्योंकि उनको जरूरत से ज्यादा राजकीय संरक्षण मिला ।

3. संघीय कर इस बिन्दु तक बढ़ा दिए जहां कि निजी प्रोत्साहन को हतोत्साहित किया गया और निजी संपत्ति अधिकार खतरे में पड़ गए व कभी कभी तो नष्ट कर दिए गए । इसकी खर्चीली अर्थनीति जिसका उद्देश्य Recovery को प्रोत्साहित करना था, वास्तव में मंदी की अवधि की ओर बढ़ा दिया ।

4. जानबूझकर या अनजाने में अगर उच्च न्यायालय व कांग्रेस द्वारा रोके नही गए होते तो तथाकथित सुधार योजना अमेरिका को मार्क्सवादी समाजवाद की तरफ ले जा रही थी ।

5. राहत योजनाओं के क्रियान्वयन का काम जिन लोगों को दिया गया वह भाट व अयोग्य थे, जिन्होंने प्रशासन के राजनैतिक लाभ के लिए काम किया और देश के नैतिक तत्व को आलसी और भ्रष्ट बना दिया ।

इसके विपरीत न्यू डील के समर्थकों ने न्यू डील के निम्नलिखित लाभों की तरफ संकेत दिया-

1. सम्पत्ति के अधिकार और मानवीय स्वतंत्रता के बीच न्यू डील द्वारा सन्तुलन स्थापित किया गया, जिसकी अब तक सभी सरकारों ने चाहे वह स्थानीय हो, राज्य के हो या राष्ट्रीय हो, अनदेखी की गई थी । अमेरिकन व्यवस्था के इन सुधारों ने उन लाखों लोगों में आशा का संचार किया जो अब तक अमेरिकन जीवन के लाभों से वंचित रखे गए थे और जिनको आसानी से एक फासीवाद या, साम्यवादी क्रांति के लिए उत्तेजित किया जा सकता था, जैसाकि यूरोप में हुआ ।

2. राहत कार्य की योजना उस समय प्रारम्भ की गई जब स्थानीय शासन और श्रम सेवा संस्थाएं अपने सारे साधन समाप्त कर चुकी थी और बेरोजगार (उनके परिवार) गंभीर रूप से अपौष्टिक भोजन से पीड़ित थे व गंभीर कठिनाईयां झेल रहे थे और वह भी एक ऐसे देश में जहां पर भोजन व कपड़ा बहुत अधिक मात्रा में बगैर बिके पड़ा हुआ था । Recovering Programme के अन्तर्गत औद्योगिक मशीनों को क्रियाशील बनाया गया जिससे कि क्रियाशक्ति के बढ़ाने के लिए सार्वजनिक निर्माण के कार्य किए गए । सुधार के अन्तर्गत एक कमजोर व क्षतिग्रस्त निजी औद्योगिक पद्धति में वास्तविक मरम्मत का काम किया गया जो बुराईयां दूर कर देने पर अच्छा कार्य करने लगी । इस प्रकार अमेरिकन जीवन पद्धति, जो पतन के कगार पर पहुंच चुकी थी, उसे सुरक्षित बना दिया गया ।

रूजवेल्ट की न्यू डील नीति के कारण उसको घोर विरोध का सामना भी करना पड़ा । उग्र अनुदारवादी उसको "उग्र समाजवादी" कहकर उसकी निदा करते थे और उग्र समाजवादी उसको उत्साहहीन और डरपोक" बताकर उसका परिहास करते थे ।किन्तु न तो वह समाजवादी ही था और ना ही डरपोक । वह अपनी धुन का पक्का और अड़चनों से घबराने वाला न था । वह अड़चनों का मुकाबला डटकर करता था और अंत में विजय भी पाता था । सुप्रीम कोर्ट ने भी उसे नीचा दिखाने का प्रयास किया और उसके प्रमुख अधिनियमों को निषिध्य भी कर दिया, किन्तु राष्ट्रपति ने अपना धैर्य न त्यागा ।

न्यू डील की बनी योजनाएं कल्याणकारी व उपयोगी सिद्ध हुई किन्तु ये धारणा कि ये योजनाएं पूर्णज्ञान से पूर्व निश्चय के आधार पर निर्मित की गई थी नितान्त निराधार है । सच तो यह है कि जैसे-जैसे परिस्थितियां बदलती गईं और नई आवश्यकताएं एवं समस्याएं सामने आती गईं उनको सुधारने के लिए योजनाओं की रूपरेखा में परिवर्तन होता गया किन्तु ध्येय निरन्तर एक ही रहा और वह था शोषित वर्ग का उत्थान इसमें राष्ट्रपति को आशाजनक ही नहीं बल्कि उससे भी अधिक सफलता प्राप्त हुई ।

प्रश्न 1. आर्थिक मन्दी से आप क्या समझते है?

प्रश्न 2. कील की परिभाषा दीजिये?

प्रश्न 3. न्यूडील के कार्यों को आप कितने भागो में विभाजित करते है और उनके अन्तर्गत कौन-कौन से कानून बनाये गये है?

प्रश्न 4. न्यूडील की कौन सी प्रथा का भारत में अनुसरण किया गया?

प्रश्न 5. सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में न्यूडील ने क्या व्यवस्था की है?

प्रश्न 6. न्यू डील योजना के स्वरूप की समीक्षा कीजिए ।

प्रश्न 7. न्यू डील के गुण दोष बताइये ।

17.9.1 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. बनारसी प्रसाद सक्सैना: अमेरिका का इतिहास

2. 2.William E Leuchtenburg : Franklin D. - Roosevelt and the New Deal.

3. Leon H. Canfield : The making of Modern America.

4. Allan Nevins and H.S, Commager : History of the United States.

5. Marshall Smelser : American History at a Glance.

6. H.B. Parkes : The United States of America.

7. R.N. Gurrent, T.H. Williams etc. American History : Survey Vol. II since 1865.

इकाई- 18

चतुर्थ विश्व की अर्थव्यवस्था-सुदूर-पूर्व में जापान का उत्कर्ष

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 जापानी आर्थिक विकास के विभिन्न चरण

18.3 जापान की अर्थव्यवस्था-1919-30

18.4 जापान की अर्थव्यवस्था-193०-1936

18.5 जापान की अर्थव्यवस्था-1937-1945

18.6 निष्कर्ष

18.7 संदर्भ ग्रन्थ सामग्री

18.0 उद्देश्य

इस इकाई को पाठ्यक्रम में शामिल करने के पीछे हमारा उद्देश्य यह रहा है कि प्रथम विश्व युद्ध के बाद जापान की अर्थव्यवस्था बुरी तरह से प्रभावित हुई थी। सन् 1919 से 1929 के मध्य जापानी अर्थव्यवस्था अस्थिर बनी रही। सर 193० सें 1938 के मध्य जापानी अर्थव्यवस्था ने अभूतपूर्व विकास करके वह सुदूर-पूर्व में सर्वेसर्वा बन गया। लेकिन फिर द्वितीय विश्व युद्ध ने उसे जमीन पर ला खड़ा किया। उस स्थिति से उभरने के लिए जापान ने जी-तोड़ कोशिश करते हुए अपनी अर्थव्यवस्था को ऊंचे स्तर पर टिका दिया। इन विभिन्न चरणों की क्रमबद्ध जानकारी इस इकाई में दी गई है। उसके साथ अपने उत्कर्ष के लिए जापान ने अपनी अर्थव्यवस्था में परिवर्तन किये उन सभी प्रयासों का अध्ययन इस इकाई में किया गया है।

18.1 प्रस्तावना

अधिकांश विश्व के देशों को प्रथम विश्व युद्ध के उपरान्त आर्थिक संक्रमण वेला का सामना करना पड़ा। सर 1920 ईस्वी में जापान इस आर्थिक संक्रमणता की चपेट में आ गया। इसके साथ ही आर्थिक मंदी और पुन:समायोजन के युग का श्री गणेश हुआ। दूसरे देशों के मुकाबले में जापान ने अपने आप को इस आर्थिक संक्रमण की अवस्था से मुक्त कर लिया। इस संक्रमण से मुक्ति प्राप्त करने का कारण यह था कि जापान की सरकार ने उदार ऋण और (अनुदान) आर्थिक सहायता नीति का अनुसरण किया। साधारण अवस्था के आर्थिक बिन्दु पर लौटने के बाद भी उसे ऐसी समस्या का सामना करना पड़ा जिसमें उसे शान्तिकालीन आर्थिक अवसरों की खोज करना था जो उसकी शीघ्र बढ़ती सम्पत्ति से समायोजित हों सकें।

18.2 जापानी आर्थिक विकास के विभन्न चरण-

प्रथम महामुद्ध से लेकर द्वितीय महायुद्ध के आरम्भ तक जापान समस्त सुदूर पूर्व के देशों में सबसे अधिक प्रभावशाली देश था । इसके उपरान्त भी जापान का आर्थिक विकास का इतिहास

विभिन्न काल अवधियों में किया जाता है । अस्तु, जापान के आर्थिक विकास का इतिहास पांच भागों में बांटा गया है ।

1. 1919-29 : आर्थिक अस्थिरता के युग की अवधि
2. 1930-36: आर्थिक विकास के काल की अवधि
3. 1937-41: विशाल आर्थिक विकास के स्तर का काल
4. 1941-42: आर्थिक पतन के युग की अवधि
5. 1943-45 : आर्थिक सुधार का युग

18.3 जापान की अर्थव्यवस्था

1919-1930-यद्यपि प्रश्न विश्व युद्ध के बाद के दशक में साधारण औसत का आर्थिक विकास हुआ तथापि इस अवधि में युद्ध कालीन औद्योगिक प्रगति का सुदृढ़ीकरण हुआ । सर्वप्रथम तो इस युग में एक स्पष्ट वित्त आर्थिक अस्थिरता थी । युद्ध के कारण कीमतों में मुद्रा स्फीति हुई । इस मुद्रा स्फीति ने भी युद्ध के बाद के काल के समायोजन कार्य को कठिन बना दिया । इससे पूर्व कि, इस दिशा में और अधिक प्रगति की जाती, 1922 ईस्वी कें भूकम्प ने जापानी अर्थव्यवस्था को एक विनाशकारी धक्का पहुंचाया ।

टोकियो और याकोहामा शहरों में सर्वत्र व्याप्त आग की लपटों ने करीब एक लाख लोगों की जानें ली । संपत्ति के नुकसान का हिसाब (3.1 सें लेकर 5.5 बिलियन येन हो गया । इस आर्थिक संक्रमणता का निदान करने हेतु जापान की सरकार ने, पुन :-समायोजन की आर्थिक नीति को अपनाया परन्तु इस नीति ने 1927 ईस्वी में बैंकों के क्षेत्र में आर्थिक क्रान्ति उत्पन्न कर दी । आर्थिक क्षेत्र के चुने हुए संभाग जिसमें रेशम का नाम उल्लेखनीय है, इस उद्योग ने विश्व संपत्ति के निर्माण में अपना हिस्सा बंटाया । इस निर्माण को तत्कालीन अमेरिकन आर्थिक नीति की खनखनाहट ने हवा दी । दूसरे ऐसे करने में असफल रहें । जो भी लाभ हुआ वह न तो संतोषप्रद था और न ही क्रमबद्ध । दूसरी बात यह थी कि आर्थिक अवस्थायें बढ़ती हुई आबादी को सहन बड़ी मुश्किल से कर पा रही थी तथा बहुत बड़ा भाग नौकरी में श्रम बाजार में आने के लिए इच्छुक था । जापान इस समय कुछ नुकसान भी उठा रहा था और जो कुछ भी प्रगति वह कर रहा था वह औद्योगिकरण के फलस्वरूप थी । जिसका आधार अस्थिर आर्थिक अवस्था ही थी । अत :एव वर्ग संघर्ष और सामाजिक तनाव की दशा बनी । उसको उन सब मुसीबतों का सामना भी करना पड़ा जो औद्योगीकरण की आर्थिक दशा में प्रगति के साथ-साथ समान समीकरण स्थापित करने की दशा में ही आती है।

आर्थिक नीति के क्षेत्र में मुख्य निर्णयों को लेने के स्थान पर वहां 20 के दशक में राजनीतिक दलों की सरकार में तत्कालीन परिस्थितियों से सहयोग करने की नीति को अहमीयत प्रदान की । शायद यही कारण है कि अब जापान की राष्ट्रीय राजनीति में विभिन्न वर्गों के स्वार्थ बहुतायत से परिलक्षित होते हैं । इस प्रकार जापान की दशा असामान्य थी ।

इन दशाओं से निपटने के लिए 20 के दशक में अनेक प्रकार की सरकारों के संगठन बनाये गये और उन्हें कार्यान्वित भी किया गया । मत्स्य उद्योग के विकास में सरकार ने सक्रिय सहयोग और प्रोत्साहन दिया तथा निपुण अधिकारियों को इस उद्योग के साधनों और

बिक्री के कामों को संभाल कर निरीक्षण करने के अधिकार प्रदान किये । सबसे बड़ी बात तो यह है कि जापान की सरकार ने इस उद्योग में एक मिली जुली पद्धति का निर्माण किया । यह पद्धति संपूर्ण जापानी आर्थिक जीवन का अंग बन गई । पद्धति यह थी कि उत्पादकों का साथ सहयोग व्यापार में लगे लोगों का मार्गदर्शन करना और उन्हें संभालने का होता था । सभी मत्स्य पालन संबन्धित लोगों को मत्स्य संघों के सदस्य होना अनिवार्य था । इन संघों को 'सुद्सान कुमीआल' कहते थे । अपने पड़ोस के संघ के सभी संबन्धित लोग सदस्य बन जाते थे । इन संघों के ऊपर एक संवैधानिक उत्तरदायित्व यह होता था कि उन्हें विदेश में भेजी जाने वाली मछलियों का निरीक्षण करना पड़ता था । सरकार के निर्देश और नियंत्रण ने भी रेशम के उद्योग में कच्चे माल के लिए प्रगति हेतु निपुणता ला दी ।

नीची दरों पर सरकारी ऋण और अनुदानों की उपलब्धियों ने दोनों जगह जापान और कोरिया में उत्पादन वृद्धि में उल्लेखनीय काम किया ।

प्रथम महायुद्ध की अवधि और उसके बाद के काल में दोनों ही वस्तुओं की श्रेणी में अभिवृद्धि ही हुई । 1925 के निर्यात संघ कानून और उत्पादक संघ कानून स्वेच्छा संस्था निर्माण की व्यवस्था प्रदान की ताकि वे सामान के गुणत्व को बनाये रखें । इन संघों में से कुछ को सरकारी अधिकार भी प्रदान कर दिये जाते थे और वे सामानों का निरीक्षण भी कर सकते थे । इस नीति को आगे भी बढ़ाया गया जिससे 1928 के कानून का शुद्धीकरण किया, (कपड़े के रेशों के निर्यात् सामान का नियम) इसने स्पष्ट कर दिया कि कैसा सामान निर्यात के योग्य नही है । सामान तब तक निर्यात के योग्य नही होता था जब तक उसको अधिकार प्राप्त संस्था से निरीक्षण नही करा लिया जाता था । कुछ बार निरीक्षण संघों के अधिकार उत्पादकों और व्यापारियों को प्रदान किये जाते थे और कुछ बार सरकार के निर्णय निर्यात संघों की स्थापना को प्रोत्साहन देते थे ।

इस प्रकार कें प्रयास छोटे निर्यात करने वालों को सहयोग प्रदान करते थे और विदेशों में बाजार निर्माण की प्रक्रिया में भी प्रेरणा देते थे ।

इसके अतिरिक्त 'झेबाटसु' का योग दान भी जापान के आर्थिक विकास में उल्लेखनीय है । 'झेबाटसु' शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है 'धनिकों' अर्थात् पैसे वालों का गुट । ये धनिकों के गुट विशिष्ट जापानी ऊंचे घराने के परिचायक है । इन विशिष्ट घरानों के विशाल और विस्तृत स्वार्थ निहित होते है ।

चार बड़े धनिक घरानों के नाम थे-

1. मिटसुई 2. मिट सुबिसी 3. सुमीटोमो 4. यसुडा । इन चार मुख्य धनिक घरानों ने जापानी आर्थिक जीवन को उठाने में भारी योगदान दिया । बीसवें दर्शक के उत्तरार्द्ध तक इन धनिकों के घरानों ने जापान के आर्थिक जीवन में अपना स्थाई स्थान बना लिया था । उनकी ख्याति इतनी ऊंची हो गई थी कि दुनियां में उनकी ऊंचाई तक के बराबर का अन्यत्र ढूंढना कठिन था ।

प्रसिद्ध लेखक 'जी. सी. ऐलन' का कथन इस प्रकार है 'अगसबर्ग का माननीय फूगर्स घराना का मुकाबला इन जापानी झेबाटसुओं ने किया तो जा सकता है और कुछ मुद्दों पर तुलना

तो संभव भी है परन्तु यह सुझाव देना गलत होगा कि फूगर्स झेबाटसुओं के मुकाबले में पहुंच चुके थे ।

जापान की आर्थिक व्यवस्था में 1919-30 के बीच की अवधि में कच्चे माल के स्टाक में करीब-करीब 46 प्रति ० की अभिवृद्धि हो चुकी थी और वहां के प्रत्येक व्यक्ति के हिसाब से करीब करीब 19 प्रति ० अभिवृद्धि हुई थी । कच्चे माल का उत्पादन मछली, रेशम और खेती के क्षेत्र में बढ़ा । तुलनात्मक दृष्टि से अनाज और दालों के क्षेत्र में उत्पादन उतना नही, कम बढ़ा।

खाद्य पदार्थो के महत्वपूर्ण विकास का मूल्यांकन करे तो पता चलेगा कि मत्स्य उद्योग में सबसे अधिक इजाफा हुआ ।

उद्योग की सभी शाखाओं में विस्तार हुआ परन्तु सबसे अधिक उल्लेखनीय विकास "तैरती डोंगी नावों" की स्थापना का हुआ । इन्हें फ्नोटिकेनेरीज की संज्ञा दी गई थी । इनको दूर प्रशान्त महासागर और बचरिंग समुद्र में संचालित किया गया यह केनेरीज व्यवस्था कुछ बड़े घरानाओं द्वारा ही संचालित होती थी । इस व्यवस्था की यह विशेषता थी कि यह समुद्र के पास मत्स्य व्यवसाय के संचालन से बिल्कुल भिन्न थी ।

1914 ई० और 1929 ई० की बीच की अवधि में कच्चे रेशम के उत्पादन में रेखांकित प्रगति आई । इस प्रगति शील उद्योग ने अपने महत्वपूर्ण प्रभाव छोड़ क्योंकि इसने अपनी प्रगति के साथ ही साथ रेशमी कौवों की मांग और शहतूत के पत्तों की मांग में भी इजाफा कर दिया । 1929 ई ० के आते आते जापान के कृषि कुटुम्बों के 2/5 भाग ने इस धन्धे को दूसरे रोजगार के रूप में अपना लिया । चरेखी और गडारी की मीलों से जो रेशम के कौवों की बिक्री होती थी और जो तनख्वाह इन कुटुम्बों द्वारा कमाई जाती थी इसका सीधी तरह का परिणाम यह हुआ कि किसानों की नकद आदमनी में उल्लेखनीय उन्नति हुई। जापानी कृषि व्यवस्था ने रेशमी कौवों की बढ़ोत्तरी पद्धति को भली प्रकार हृदयंगम कर लिया, क्योंकि रेशम उद्योग के लिए निपुण कारीगर और कम पूंजी की आवश्यकता है अथवा कम भौतिक साधनों की आवश्यकता होती थी । उस समय जबकि जापान में और अधिक जमीन इस काम के लिये उपलब्ध नहीं की जा सकती थी, इस दूसरे रास्ते ने किसानों को जबरदस्त राहत पहुंचाई ।

अमेरिका में सम्पूर्ण सुविधा सम्पन्न हौजरी व्यवसाय के लिए रेशम के उत्पादन की मांग थी । इस मांग को जापान में बढ़ते हुए रेशम उत्पादन ने पूरा किया। उत्पादन के साधनों में जापानियों ने बढ़ती हुई मांग को पूरा करने कें लिये अनेकों सुधार किये । शहतूत के पत्तों के पेड़ों को उगाने के तरीकों में भी सुधार किया गया ।

सिल्क के कीड़ों की उच्चतम नस्ल पैदा करनें के लिए भी सुधार और शीघ्र क्रिया को अपनाया गया। कीड़ों के अन्डे पैदा करने और उनके निदान की क्रियाओं में भी सुधार किया गया । अनेक प्रकार के धागों को चकरी में लपेटने की मशीनों में भी सुधार किया गया तथा स्पष्ट सुधार रेशों के संचालन प्रणाली में भी हुआ । रेशें की किस्म का उत्पादन चरखी के तले (तसली) के आधार पर बढ़ा।

यह प्रगति सभी क्षेत्रों में ढाई गुना निर्धारित समयावधि में हुई । चर्खी के उद्योग को फैक्ट्री व्यवसाय में परिणित करनें का कार्य भी हुआ। किन्तु इस प्रकार के, परिवर्तन ने युद्ध के पूर्व एक लंबा समय 20 वर्ष का ले लिया । साथ ही साथ यह कार्य उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया ।

1929 ई ० और 32 ई ० के मध्य हाथ की चरखियों से केवल 4 प्रनिशत का उत्पादन होता था । स्वयं रेशों के निर्माण में ही चार गुना उत्पादन बढ़ा और साथ ही साथ इसके नाम में भी बढ़ोत्तरी हुई तथा इनकी गिनतियों में कमी आई । प्रत्येक रीलिंग तसली के रेशों में बढ़ोत्तरी हुई जो संख्या 1911 ई ० में 36 थी वह 1928 ई ० में बढ़कर 90 हो गई थी।

सिल्क बुनाई के उद्योग में भी विकास हुआ । जापानी परिधानों के लिये संकड़े रेशमी धागे तो अब भी हाथ के करघों पर ही बनाये जाते थे । परन्तु बीस के दशक में कुछ काल के लियें हाथ करघों के स्थान पर बिजली से चलने वाले संकड़े करघों का प्रयोग होने लगा। इस दरम्यान व्यापारियों का वो भाग जो निर्यात के लिये कटिबद्ध था और वो संकड़े नहीं वरन् बड़े करघों का प्रयोग करता था, उन्होंने केवल बड़े लूमों का विस्तार ही नहीं किया वरन् बड़े पैमाने पर उनकी दिशा ही बदल दी। कपड़े के उद्योग में युद्ध के पूर्व की प्रगति बनी ही रही।

बुनाई के टेकुऐ जो जापान में सन् 1914 में 2,4 15,000 थे अब बढ़कर सन् 1920 में 3,814,000 हो गये। क्वांटो भूकम्प का धक्का जो आया उसने 9,00,000 बुनाई के टेकुऐ नष्ट कर दिये तथापि उनकी संख्या बढ़कर सन् 1929 में 6, 650,000 हो गई । यह सब होने के उपरान्त भी जापान में कारखानों और फैक्ट्रियों की संख्या उतनी नहीं बढ़ी जितनी वहां के लोगों में कार्य करने की शक्ति थी। दूसरे शब्दों में यूं कहा जा सकता है कि विशिष्ट प्रकार की मिलों और फैक्ट्रियों की संख्या अप्रत्याशित रूप में बढ़ गई । उदाहरणार्थ-जापान में 44 कम्पनियां और 247 मीलें थीं । सन् 1913 ई. में प्रत्येक बुनाई टेकुऐ की संख्या 1600 थी जो 1929 ईस्वी में बढ़कर 27000 हो गई । इसके अतिरिक्त कम्पनी में विकास की संख्या 55,000 से बढ़कर 1,13,000 हो गई। इससे भी बड़ी बात यह कि वहां घोषित एकीकरण की प्रवृत्ति कार्यशील थी । फलस्वरूप 1926 ईस्वी तक 56 प्रतिशत बुनाई टेकुऐ सात बड़ी कम्पनियों के नियन्त्रण में चले गये।

वस्तुत: धागा बनाने वाले लोग स्वयं ही गृह उद्योग के कपड़ा बनाने वाले मजदूरों को धागा निर्यात करते थे और कुछ बड़े शेडों के बुनकरों को भी धागा देते थे । इसके बाद यह हुआ कि स्वयं अपनी मिलों में कताई करनें वाले मजदूरों ने अपने मिल शेड बुनाई के लिये भी बना लिये। जापानी सूती उद्योग की 1913 से 1929 तक की अवधि के मध्य यह विशेषता रही कि कताई और बुनाई की मीलें अब अलग-अलग न होकर एक इकाई बनने लगे। सूती उद्योग की कताई और बुनाई की आर्थिक अवस्था जापान में बहुत प्रगति कर गई । फिर भी किसी प्रकार खेती के क्षेत्र में जापान का उत्पादन गिरा । संयुक्त उत्पादन के विकास को देखते हुए कृषि उत्पादन का पतन कोई विशेष उल्लेखनीय नहीं था क्योंकि संयुक्त उत्पादन ने इस गिरावट को बहुत ही कम प्रभावित किया था। निर्धारित नपी जमीन, श्रम, पूंजी और इनके प्रयोग में लाई वस्तुएं जैसे बीज और खाद, चालू लागत (बीज और खाद्य) वस्तुत : बढ़ गई और पूंजी की लागत भी उसकी तरह उद्योग में बढ़ी जैसा कि पहले हुआ। परन्तु सिल्क के रेशो में ऐसा नहीं हुआ क्योंकि रेशम के पेड़ों की शक्ति कम हुई और अन्ततोगत्वा वो जमीन पर गिरने लगे। अब उपजाऊ क्षेत्र की जमीन बहुत कम हों गई। इसके साथ ही खेती की श्रम शक्ति भी वस्तुत: कुछ

कम ही हुई । परन्तु बुनियादी रूप में इस क्षेत्र में पतन नहीं हुआ जब तक की तीस के मध्य युग का दशांक नहीं आ गया ।

सम्बन्धित सूचकांकों की दृष्टि से 1925. ईस्वी से 1931 ईस्वी के, युग में किसानों की बुनियादी रूप में उत्पादन हेतु प्रोत्साहन में कमी आई क्योंकि उन्हें तुलनात्मक लिहाज से लाभ नहीं हुआ। चीजों के दाम जो कृषक प्राप्त करते थे उसमें 53.4 प्रतिशत की गिरावट आ गई। कृषि वस्तुओं के अलावा दूसरी वस्तुओं में भी तेजी से गिरावट आई । उत्पादन सूचकांक 46 प्रतिशत थे जबकि थोक भाव सूचकांक. 42.7 प्रतिशत थे। खेती की आमदनी पर वास्तविक प्रभाव दो प्रकार के थे-

1. सामूहिक गिरावट का प्रभाव
2. चीजों के भावों में सम्बन्धित कमी

उपर्युक्त विश्लेषण इस बात का द्योतक है कि बीस के दशक में जापान ने आर्थिक क्षेत्र में शीघ्रातिशीघ्र प्रगति की। पीछे के दृश्यों का लाभ लेते हुए हमें 1926 की मुद्रा स्फीति तक जाना संभव हो जाता है और उसका दबाव भी मालूम हो जाता है। इस मुद्रा स्फीति का दबाव बढ़ता ही गया और 192 9-32 ईस्वी में तो अपनी पराकाष्ठा तक पहुंच गया। इसके साथ ही 1927 का बैंक संक्रमण भी आया परन्तु किसी प्रकार इस बैंक संक्रमण वेला ने जापानी वित्त अवस्था को नुकसान नहीं पहुंचाया और वह ऐसी ही बनी रही जैसी पहले थी । उत्पादन और व्यापारिक क्रियाकलाप को आगे आने वाले दो वर्षों मैं सम्बल मिला इसके दो कारण थे-

1. पैसों की उपलब्धि आसान हो गई
2. बाहर खूब समृद्धि हो गई और वह अमेरिका में अधिक हुई ।

औद्योगिक उत्पादन 1926-29 ईस्वी की अवधि में 23 प्रतिशत बढ़ा और इसी अनुपात में ही निर्यात में बढ़ोतरी हुई।

18.4 जापान की अर्थ व्यवस्था: 1930-36

1931 ई. के बाद जापान में व्यापार और उद्योग के क्षेत्र में तेजी से प्रगति हुई । मिनसीएटों के नेतृत्व में नये वित्त मंत्री ने जिसने कि 1927 ई. में कार्यभार संभाला उसका मत था कि पुरानी मान्यता के अनुसार सोने के स्टेण्डर्ड पर लौट कर घनिष्ट स्थिरता प्राप्त करना जापान के लिए अधिक इज्जत की बात होगी। वित्त मंत्री ने इस आदर्श कार्य के लिए प्रत्येक छंटनी के कदम उठाने के लिए अपना मानसिक निर्णय बना लिया । येन की कीमत को डालर और स्टरलिंग के मुकाबले करीब 2/3 गिरने दिया गया । और मुद्रा बदलने के आपसी नियमों को कठोरता से लागू किया गया।

इस प्रकार से सरकारी खर्चों में कमी की गई । उद्योगों में भी कटौती बचत कानूनों को लागू कर के की गई। जनवरी 1938 में सोने के स्तर को ऊंचा किया गया । आयात-निर्यात की दरों में भी वृद्धि की गई । सन् 1911 ई. में टेरिफ दरें 10-15 प्रति. से, अधिक नहीं थी परन्तु 1926 ई. में लौह स्टील औरस डाई स्टफों को भारी राहत प्रदान की गई और कर की दर सौ प्रतिशत से अधिक कर दी गई। ऐशो आराम की चीजों पर सौ प्रतिशत से भी अधिक ड्यूटी लगा दी गई। अब जापान के व्यापार अर्थात् निर्यात को धक्का लगा क्योंकि उसकी चीजों

पर विदेशों में भारी कर लगा दिया गया। चीन की आयकर दरें काफी हद तक 1929 ई. में और भारत की दरें 1930-31 में बढाई गईं । ओटावा के 1932 के समझौते के अनुसार ब्रिटिश साम्राज्य के बाजारों ने जापानी सामान के प्रति भेदभाव की नीति- अपनाई । जापान ने भारत के सूती कच्चे माल के आयात का बहिष्कार किया परन्तु उसने किसी प्रकार 1930 के दशक में भेदभाव की प्राथमिकता वाली नीति का अनुसरण किया था। आयकर दरों में जबरन भारत के लिए कमी भी कर दी। जापान की व्यापार दरें भले ही उसके लिये हितकर सिद्ध नहीं हुई हो परन्तु उसका निर्यात 1929 ई. और 1937 ई. के मध्य 70 प्रतिशत बढ़ा। इस निर्यात उत्थान के समक्ष दुनिया का कोई भी मुल्क जापान के सामने नहीं टिक सका । इस उत्कर्ष के साथ विशेषता यह थी कि उस समय आर्थिक मंदी का समय चल रहा था । फ्रान्स, जर्मनी, ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका आदि राज्यों का निर्यात घटा था । आयकर प्रतिबन्धों के उपरान्त भी जापान ने ब्रिटिश सूची कपड़ों कें बाजार में कटौती ला दी। 'जी. सी. ऐलन' के अनुसार- (जापान का एक संक्षिप्त इतिहास) इस नीति की सफल कार्यान्विति ने जापानी अर्थव्यवस्था में लचीलापन ला दिया। 1927 ई. में जापान के सूती कपड़ों का निर्यात अमेरिका के निर्यात का केवल एक तिहाई (1/3) भाग ही था, परन्तु 1935 ई. में यही निर्यात ग्रेट ब्रिटेन के निर्यात का 40 प्रतिशत बढ़ गया। मूल्यों की दृष्टि से जापान का निर्यात प्रतिवर्ष 5.2 प्रतिशत बढ़ता ही गया।

1937 ईस्वी में जी. एन. पी. की सेवायें और निर्यात की 27 प्रति बढ़ोतरी हुई । सन् 1938 में जापान के तैयार माल का निर्यात 58 प्रतिशत हो गया जबकि 1913 ई. में इसका निर्यात मात्र 13 प्रतिशत ही था।

मंचूरिया, कोरिया, फोरमूसा और चीन जैसे देशों में जापान का पूंजी निवेश 1930 के दशक में बहुत अधिक बढ़ गया । सबसे अधिक उसका पूंजी निवेश मंचूरिया में ही हुआ जहां पर बहुत बड़े पैमाने पर कोयले और लोहे का उत्पादन किया गया। जापान का विदेशी पूंजी निवेश सन् 1938 में 1.25 (दस हजार खरब) हो गया।

जापान के जी. एन. पी. की खपत का भाग 1930 के दशक में केवल 60 प्रनिशत था। बचे हुए उपभोग के निवेश का भाग जापान की सरकार द्वारा वहन किया जाना था। सरकारी उपभोग 1938 में 25 प्रतिशत था जो 1913 ई. के जी. एन. पी. के मुकाबले 9 प्रति था। जी. एन. पी. का घरेलू सैनिक खर्च 16 प्रति. होता था। भारी सैनिक खर्च ने औद्यौगिक तैयार वस्तुओं की भारी मांग खड़ी कर दी। मेजी युग के मुकाबले पूंजी निवेश में भी भारी बढ़ोतरी हुई । इस युग में भी निर्यात से उत्पन्न अवस्था, भारी सैनिक मांग तथा ऊंचे निवेश अवस्थाओं ने तीव्र औद्योगिक विकास को जन्म दिया। वहां औद्योगिक ढांचे में भी भारी परिवर्तन इसी युग में हुआ । कुछ समय बाद भारी उद्योग, धातु-अभियांत्रिकी और रसायन उद्योग जापान में प्रभावशाली हो गये। जापान में अब आयात पूंजी व्यवस्था पर भरोसा करना बंद कर दिया । यद्यपि 1930 ई. के दशक में रेशम के उद्योग में पतन हुआ परन्तु इस घाटे की आपूर्ति तीव्र गति सें बढ़ने वाले ऊनी और अन्य धागों के उद्योग के लाभों सें कर लिया। जापान के उद्योग कोरिया और मंचूरिया से पूर्णत: जुड़े हुए थे जहां पर औद्योगिक उत्पादन का

विकास स्वयं जापान सें भी अधिक था । जेंबाटसुओं के विनियोग में बहुत बढ़ोतरी हुई । उनका कार्यकलाप वैसे तो भारी उद्योगों, यातायाता और उत्खनन तक ही सीमित था परन्तु छोटे उद्योगों पर भी उनका नियन्त्रण था जैसे उनके निजी बैंक, व्यापारिक और फूलोलेनी कम्पनियां इत्यादि। वित्त क्षेत्र में उनका प्रभाव बैंकों को केन्द्रीभूत करने के कारण हुआ। सन् 1920 ई. में तो बैंक ठीक ठाक थे परन्तु इसके तुरन्त बाद वित्तीय संक्रमणता की बेला नें बहुत से बैकों का दिवाला निकाल दिया अत: सरकार ने समन्वय नीति का आश्रय लिया । सन् 1937 ई. तक 377 बैंक रह गये । जिनमें से केवल 7 बैकों ने 2/3 भाग पैसों की देनदारी की । जेबाटसु सभी बड़े बैंको, न्यासों और बीमा कम्पनियों को नियन्त्रित करते थे । वे किसी भी एक भाग के एकाधिकारी तो नहीं होते थे, परन्तु प्रत्येक कुटुम्ब समूह के अत्यन्त विस्तृत स्वार्थ होते थे। ये प्राय: एक दूसरे को आपस में मजबूर करके अपना एक अलग क्षेत्र बना लेते थे । लालफीताशाही और जेबाटसुओं के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध थे । सन् 1930 के दशक में कतिपय जेबाटसु सेना (मिलिट्री) शासन द्वारा कभी भी विश्वास के पात्र नहीं बन सके। जैसे-जैसे युद्ध की अर्थव्यवस्था का समागम होता चला गया वैसे-वैसे सरकारी शिकंजा मुख्य-मुख्य उद्योगों को कसता चला गया।

युद्ध की अवधि के दरम्यान सरकार ने आर्थिक व्यवस्था में 40 प्रति. की कमी कर दी। जापान के उद्योग के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रगति हुई । सभी प्रकार का बुनाई व्यापार जिसमें कच्चे रेशम का व्यापार सम्मिलित नहीं है, ने निश्चित और बुनियादी तरक्की उत्पादन की साज-सज्जा संगठन के क्षेत्र में की।

इनमें से मुख्य-मुख्य धातु की कले और रसायन उद्योग थे जिनके शास्त्राशस्त्रों पर होने वाले खर्चें और औद्योगिक संरचना की आवश्यकताओं ने प्रेरणा दे रखी थी। वस्तुओं का उत्पादन जापानी उद्योग में केवल 1930 ई. और 1936 ई. के मध्य 33 प्रति. बढ़ा । इसके विपरीत दूसरी वस्तुओं में 83 प्रति. का उछाल आया । उत्तरार्द्ध के वर्षों में जहां मशीनरी उद्योग में उत्पादन 1609 करोड येन आंका गया । जापान वस्तुत अपनी सभी आवश्यकताओं को पूरा करनें में सक्षम था सिर्फ कुछ विशिष्ट विकसित मशीने तथा धातु निर्माण मशीनों की साज सज्जा बाकी रह जाते थे।

उसके उत्पादन का विकास जो अग्नि शक्ति से था उदाहरणार्थ-बुनियादी वस्तु कोयला और लोहा, सीमेन्ट और बिजली के क्षेत्र में हुआ उसका प्रतिबिम्ब विकसित उद्योगों की शक्ति में भी दृष्टिगोचर हुआ । कास्टिक सोडा, सोडा निर्माण के सांचे और दूसरी बुनियादी रासायनिक वस्तुओं में भी प्रगति हुई । यह प्रगति तीन गुना बढ़ गई और कहीं कहीं तो इसके आंकड़े भी ऊपर चले गये।

जापानी उद्योगों का ढांचा पहले जैसा अब भी बना रहा । क्योंकि इस काल में उद्योगों ने वही प्रवृत्ति प्रदर्शित की जो पहिले दशक में थी । सम्पूर्ण उत्पादन क्षेत्र में तथा योग्यता की श्रेणी में और फैक्ट्री के उत्पादन में विकास हुआ । इसके, अलावा भी वहां छोटे फैक्ट्रियां और प्लान्ट काम कर ही रहें थे, जिनका स्वरूप विलक्षण भी था और जिनका क्षेत्र सीमित और उनमें 100 से अधिक मजदूर कार्य नहीं करते थे । बड़ी फर्मे और उनसे मिल जाने वाली ऐसी

कम्पनियों ने अपना अस्तित्व भारी कारखानों के बीच भी बना रखा था । ऐसी कम्पनियों के साथ अब नये लोग भी जुड़ गयें थे जिन्होंने अपना महत्व संस्थाओं में मिलकर बना लिया अब वे पैदल सेना और समुद्री सेना के लिए हथियार और बारूद बनाने लगे। विदेशी व्यापार के क्षेत्र में सघन एकीकरण की प्रक्रिया आयात-निर्यात के क्षेत्र ने जापान को व्यवसायिक सफलता प्रदान की-यह सफलता सूती और तैयार माल के क्षेत्र में महत्वपूर्ण हुई।

गृहक्षेत्र में आर्थिक मंदी जो 1930-31 ई. में आई, ने गाड़ी निर्माण कार्य को प्रोत्साहन प्रदान किया। अब यह कानूनी रूप से निर्मित करायें जाते थे और सरकार इसके लिये स्वीकृति प्रदान करती थी इसके लिये उसने मेजर इन्डस्ट्रीज कन्ट्रोल ला और इन्ड़स्ट्रीज एसोसिएशन ला,1931 बनाया । बहुत सारी मुख्य कम्पनियों और उद्योगों में सरकार नें हस्तक्षेप किया और नियन्त्रित किया। इनमें कुछ मुख्य है : लोहा, स्टील, बिजली, जहाजरानी इत्यादि । इनमें से मुख्य तौर पर वाहन उद्योग 1936 ई. के न आने तक सक्रिय काम नहीं कर सका क्योंकि अब सरकार ही वाहन उद्योग को राष्ट्र स्तर पर नियंत्रित करने लगी और इसे आर्थिक उद्योग के क्षेत्र से निकाल कर युद्ध के क्षेत्र के रूप में विकसित किया जाने लगा । मंचूरिया को छोडकर सम्पूर्ण जापान में प्राइवेट पूंजी का निवेश द्वितीय विश्व युद्ध के अन्त तक बना रहा। मंचूरिया में उत्पादन युद्ध अवस्था के अन्तर्गत होता था अतएव वहां पर सम्पूर्ण आर्थिक उद्योगों का नियंत्रण सरकारी तन्त्र के नीचे आ गया था।

जहां चमत्कृत औद्योगिक प्रगति जापान के अन्दर हुई उसका बिल्कुल विरोधाभास जापान की खेती के क्षेत्र में हुआ । इस क्षेत्र में आर्थिक मंदी ने अपनी भयंकर विनाशलीला दिखाई। सन् 1930- 31 के प्रचलित मूल्य दरों की दृष्टि से जापानी किसान तो कर्जदार बन चुका था, उसके ऊपर भारी टैक्सों का बोझा चढ़ चुका था, किराया चुकाने की शक्ति न थी इसके अतिरिक्त एक फार्म के मालिक के पांच से लेकर छह हजार तक कर्जा चढ़ चुका था । कृषि का उत्पादन तुलनात्मक दृष्टि से आने वाले वर्षों में बहुत कम बढ़ा । खेती की उपज की वस्तुओं के दाम 1935 के पूर्व ही बढ़कर मंदी युग के पहिले के मूल्यों के समान हो गये । इस मूल्य स्तर पर तो किसान औद्योगिक वस्तुएं खरीदते थे । इस अवधि में कृषि क्षेत्र में आई अशान्ति ने ग्रामीण इलाकों में सामाजिक अशान्ति भी उत्पन्न कर दी क्योंकि युद्ध के लिये सैनिकों की भरती अधिकतर ग्रामीण कुटुम्बों से ही की जाती थी। ऐसा होने पर भी खर्चे की प्रक्रिया को हथियारों के मुकाबले प्राथमिकता प्रदान नही की गई जबकि टोकियो सैनिक क्रियाकलापों का नेतृत्व केन्द्रीभूत होता जा रहा था । सरकार ने चावल और रेशम के दामों में स्थिरता लाने के बहुत प्रयास किये और काफी मात्रा में इसलिये पूंजी निवेशन भी किया । सरकार ने फार्मों के कर्जों को पुन: निर्धारित करने, कृषि कानूनों में राहत देने, रासायनिक खाद के मूल्यों को नियन्त्रण करनें और मंचूको को भी प्रोत्साहित करने के प्रयोग और प्रयास किये। परन्तु ये सब मामूली प्रयास थे और इनसे मूल समस्या बिलकुल नहीं सुधर सकी। बहुत महत्वपूर्ण विकास की बात तो यह थी कि खेती से हटकर औद्योगिक कार्यों पर जोर दिया जाने लगा और शहरी धन्धों को अपनाया जाने लगा । इस परिवर्तन से खेती क्षेत्र के लोगों की आबादी में कमी न हो सकी । परन्तु सरकार ने इस बात का ध्यान अवश्य रखा कि वहां बढ़ी हुई आबादी को लाभ का अवसर अवश्य मिले । फैक्ट्री के कर्मियों की संख्या जो 1930 में

1,886,000 थी अब 1936 में 2,876,000 हो गई । सन् 1936 तक जापान के प्रत्येक तीन में से एक व्यक्ति शहर में रहने लग गया था और वह शहर 30,000 या इससे अधिक जनसंख्या का होता था । प्रत्येक चार में से एक आदमी एक लाख की आबादी वाले शहर में रहने लग गया था । खान उत्पादन तथा अन्य निर्माण कार्यों ने, जापान की कुल आबादी का 1/4 भाग अपने में खपा लिया था । इसमें अधिक तादाद सशक्त पुरुषों की ही थी । ये लोग 1936 ई. में प्रचलित मूल्यों के आधार पर कुल राष्ट्रीय उत्पादन का 40 प्रति. तैयार करते थे।

केवल उत्पादन जिसमें हस्तकला और फैक्ट्री दोनों सम्मिलित थे, का मूल्य मिलकर 5 बिलियन येन (1 बिलियन= 10 खरब) हो गया । ये रकम कुल राष्ट्रीय आय का करीब-करीब 1/3 होती थी फैक्ट्री के क्षेत्र में उत्पादन 3.6 (दस हजार खरब) येन आंका गया था । यहां परम्परागत बुनाई के व्यापार को रसायन और मशीन उद्योग चुनौती दी गई । बहुत कुछ हद तक 1936 ई. की तुलनात्मक दरों की दृष्टि से इन नये व्यापारिक संगठनों ने वास्तविक उत्पादन के क्षेत्र में प्राचीन बुनाई उद्योग को बहुत ही पीछे छोड़ दिया ।

सबसे अधिक विकास भारी उद्योगों के क्षेत्र में हुआ । ये भारी उद्योग नागरिकों के लिये उपयोगी होने के साथ ही सैनिक क्षेत्र में भी अति उपयोगी थे । ये उद्योग सैनिक दृष्टि से भी इसलिए अधिक महत्वपूर्ण थे क्योंकि एक दूसरा विशाल जटिल कार्य उद्योग जापानी राजनीतिक नियंत्रण में मंचूरिया में खोला गया था।

1930 ई. से 1936 ई. के मध्य की सही जापानी अर्थव्यव्था को निम्नवत तरीके से संक्षिप्त किया जाता है।

1930 से 1936 ई. के मध्य, 1930 के मूल्य स्तर के आधार पर जापान का राष्ट्रीय उत्पादन 10.2 (दस खरब) येन से बढ़कर 15.8 (पन्द्रह खरब) येन हो गया। वास्तविक रूप से जापान की आय एक प्रकार से वस्तुत: कम ही बढ़ी है। इसका कारण यह था कि वस्तुओं का आदान प्रदान उल्टी दिशा में हुआ क्योंकि आर्थिक मंदी के फलस्वरूप 1931 ई. से ही येन के भावों में गिरावट आरम्भ हो गई।

1930 से लेकर 1936 ई. तक के मध्य विदेशों में और उपनिवेशों में भेजे जाने वाले माल की कीमत में पांच प्रति. की गिरावट आई । इसके विपरीत आयात की कीमतों में 29 प्रति. की वृद्धि हुई। इस प्रकार जापान को अब पहिले से कहीं अधिक माल बाहर भेजना पड़ा और उसको अपने 1936 ई. के आयात की पूर्ति करनी थी। ऐसा इसलिये भी करना पड़ा क्योंकि व्यापारिक शर्तें समान नहीं रही और उनमें परिवर्तन हों गया। इसके अतिरिक्त निर्यात में राष्ट्रीय आय में हुए वास्तविक लाभ के एक बटा पांच (1/5) भाग का खर्चा कर दिया। अत: वास्तविक राष्ट्रीय आय में केवल 4.3 बिलियन ही सुलभ हो सकी। इसके उपरान्त भी यह एक प्रभावशील अभिवृद्धि थी।

1930 ई. से 1936 ई. मध्य वास्तविक राष्ट्रीय आय का 40 प्रति. लाभ, नागरिक उपभोक्ताओं की वस्तुओं की अभिवृद्धि के कारण हुआ। परन्तु राष्ट्रीय आय के अधिक लाभ अतिरिक्त पूंजी उपलब्धियों और सैनिक सामान के कारण ही हुआ और दोनों के मुकाबले राष्ट्रीय आय का लाभ पहिले घटक के कारण अधिक था। 1930 ई. में तो तुलनात्मक दृष्टि से सैनिक

खर्च कोई अधिक नहीं था। शुद्ध पूंजी निवेश जिसमें सभी प्रकार का सामान और उस समय उपलब्ध पूंजी भी सम्मिलित है, अप्रभावशील रहा। सन् 1930 की कीमतों के आधार पर 1936 ई. में सैनिक खर्च बढ़कर 1 बिलियन येन हो गया था। शुद्ध सरकारी और प्राईवेट नियोजन मिलकर 2 बिलियन येन हो चुका था। इस प्रकार राष्ट्रीय आय का करीब 20 प्रति. भाग नागरिक उपभोग से निकाल कर अन्यत्र दूसरे कामों में लगाया जाने लगा। इस 3 बिलियन येन का अधिकतर भाग स्वयं जापान में ही फिर लगाया जाता था जो फैक्ट्रियों के प्लांट और उनकी सुसज्जा और जापानी धन्धों में व्यय हो जाते थे ये खर्चा जापान में नागरिक तथा सैनिक दोनों आवश्यकताओं हेतु होता था। शुद्ध पूंजी निवेश मंचूरिया, उत्तरी चीन और दूसरी अन्य बाहर के स्थानों में मिलाकर करीबन 250-350 मिलियन (1 मिलियन=10 करोड़ येन) खर्च होते थे।

18.5 जापानी अर्थ व्यवस्था: (1939-45) ईस्वी

1939-45 ई. की अवधि में जापान की अर्थव्यवस्था टूटने लगी क्योंकि इसका कारण द्वितीय महायुद्ध था। इसका कारण यह भी था कि जापान लगातार कमोबेसी 1939 से 1945 ई. तक युद्ध में लगातार रत था। पीछे के वर्षों में जर्मनी के मुकाबले जापानी बड़े उद्योग पर अधिक बोझ आ गया था। विशेष धक्का कच्चे माल के उत्पादन और मानव शक्ति की उपलब्धि के क्षेत्र में लगा। फलस्वरूप 1939 और 1944 के बीच में पतन हुआ। परम्परागत और एटम बम्बों की बौछार के कारण जापान के शहरों को युद्ध ने बहुत नुकसान पहुंचाया। जापान के 1/4 मकान और निर्माण नष्ट होकर धूल में मिल गये। प्रथम दो वर्षों तक तो अमेरिका ने क्षतिपूर्ति के रूप में कुछ उद्योगों की शक्ति को नष्ट करने के लिये पैसा लगाया। अनेक व्यापारिक जहाजों को तो डुबो दिया गया। एशिया महाद्वीप में जापान को अपने उपनिवेशों और प्रभावित स्थानों को छोड़ना पड़ा। उसके पूंजी निवेशन के सबसे बड़े क्षेत्र मंचूरिया और चीन उससे छीन लिये गये। इस प्रकार उसका सुदूर पूर्व का व्यापारिक एकाधिकार समाप्त कर दिया गया।

18.6 निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेणात्मक अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दो युद्धों के बीच जापानी आर्थिक गति में अनेक उतार चढ़ाव आये । 1919 से 1929 ई. के बीच प्रथम महायुद्ध के परिणामस्वरूप जापान की अर्थव्यवस्था अस्थाई बनी रही । 1930 और 1938 ईस्वी के बीच जापान ने न केवल अपना आर्थिक विकास ही किया बल्कि सुदूर पूर्व में वह तो सर्वेसर्वा बन गया । लेकिन द्वितीय महायुद्ध के काल में जापान को आर्थिक संक्रमणता ने आ दबोचा। उसे न केवल अपने घर में ही आर्थिक घाटा वहन करना पड़ा बल्कि उसे अपने चीन में स्थित उपनिवेश और मंचूरिया उपनिवेश से भी हाथ धोना पड़ा ।

18.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. जी. सी. एलेन - दी शोर्ट ईकानोमिक हिस्ट्री आफ जापान
2. विलियम लोकवुड - दी ईकानोमिक डेवलोपमेंट आफ जापान
3. ई. बी. शुनपीटर - दी इंडट्रीयलाइजेशन आफ जापान एण्ड मानचूकूओं
4. जोन ओरचार्ड - 'जापान'- ईकोनोमिक पोजीशन, दी प्रोग्रेस आफ इंडस्ट्रीयलाइजेशन'

5. जॉन लिविंगस्टन - "दी जापान रीडर, भाग I"

इकाई - 19

इन्टरनेशनल कमइन्टर्न पैक्ट तथा सोवियत विदेशी नीति

इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 कमइन्र्टन का (अ) अस्तित्व, (आ) संरचना

19.3 कमइन्र्टन की प्रकृति एवं उदय

19.4 कमइन्र्टन की नीतियां

19.4.1 21 सत्रीय प्रलेख

19.4.2 यूनाईटेड फ्रन्ट

19.5.1 कमइन्र्टन तथा विदेशी नीतियां

19.5.2 पारस्परिक सम्बन्धों का विश्लेषण

19.6 कमइन्र्टन का अन्त

19.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

19.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप अध्ययन करेंगे :

* कमइन्र्टन कब क्यों और कैसे बनी?
* कमइन्र्टन क्या है तथा उसकी संरचना के उद्देश्य क्या थे,?
* कमइन्र्टन की राजनैतिक भूमिका एवं कार्य।
* कमइन्र्टन के प्रति विश्वस्तर कितनी हलचल तथा विवाद थे और क्यों?
* कमइन्र्टन द्वारा रूस को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर क्या महत्व मिला?
* रूस की विदेशी नीति तथा कमइन्र्टन का प्रभाव क्या था?

19.1 प्रस्तावना

इस इकाई में कमइन्र्टन के अस्तित्व की रूप रेखा, उसके उदय, संरचना एवं प्रवृत्तियों से आपका परिचय कराया जाएगा। रूस में लेनिन द्वारा इस संस्था का उद्भव तथा विश्वस्तर पर तथा आन्तरिक रूप से इसका प्रभाव क्या और क्यों हुआ इसकी विवेचना की जाएगा कमइन्र्टन तथा इसकी अन्य सहायक संस्थाओं ने सोवियत रूस के प्रभाव को विश्व स्तर पर उठाने मे क्या योगदान दिया तथा उससे क्या मतभेद उत्पन्न हुए और विदेशी नीति पर इस बदलाव का क्या असर था इसका भी आप अध्ययन करेंगे।

19.2 (अ) कमइन्र्टन का अस्तित्व-संरचना

रूस के क्रान्तिकारी बाल्शविक विश्व क्रान्ति के स्वप्न देख रहे थे जिसमें न केवल प्रालीतैरियत (मजदूर वर्ग) बल्कि स्वयं रूस के हित निहित थे । बाल्शविक दर्शन का तो अर्थ ही था- प्रोपैगैन्डा, आन्दोलन तथा क्रान्ति ! इसी मन्त्र से रूस की सत्ता प्राप्त हुई थी और इसी नीति

द्वारा राजनैतिक महत्ता बढ़ी थी और 10-20 व्यक्तियों वाले दल से बढ़कर उसकी मेम्बरशिप 3,00,000 तक जा पहुंची थी । इसके अतिरिक्त इस हितकारी दल के सहस्त्रों हमदर्द भी सारे संसार में फैले थे । परन्तु किसी भी क्रान्ति तथा आन्दोलन के लिए एक संस्था एक अवयव का अस्तित्व अनिवार्य है जिसके द्वारा विश्वस्तर पर सभी बाल्शविक एकजुट हो सकें और एक जगदाधारी कम्यूनिस्ट आन्दोलन द्वारा सभी युयुत्स मार्क्सवादी पार्टियों को एकाग्र करके नवयुग का निर्माण कर सकें।

एक ऐसे समय में जब रूस दुर्भिक्षग्रस्त था आन्तरिक युद्ध से पीडित क्रान्ति विरोधी] तत्वों से भिडन्त में जीर्ण था लेनिन ने तीसरी इन्टरनेशनल अर्थात कमइर्न्टन की नींव डाली जो विश्व के मजदूर संघ का सोवियत झन्डे तले नेतृत्व कर सके । लेनिन सम्भवत: मार्क्स के प्रथम अंतर्राष्ट्रीय (1864) से प्रभावित और प्रेरित होकर और द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय की असफलता (1914) से दुखद मन से सुधार तथा क्रान्ति में सम्पूर्ण अलगाव चाह रहा था । इसी उद्देश्य से उसने 2 मार्च, 1919 में कान्फ्रेन्स की जिससे तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय की संरचना हुई। इस तीसरी अन्तर्राष्ट्रीय कमइर्न्टन का सपना लेनिन के साथ युद्ध के समय से लेकर जिमरवाल्द एवं क्रियंथाल के प्रवास के समय तक चलता रहा था । यद्यपि आन्तरिक युद्ध के समय ट्राय्सकी महत्ता थी और अर्न्तदेशीय मामलों में कभी लेनिन के विचारों को चैलेन्ज भी किया जा सकता था पर अन्तर्राष्ट्रीय सभी मामलों, योजनाओं एवं पारस्परिक सम्बन्धों में लेनिन ही के शब्द माननीय थे, क्योंकि दिसम्बर, 1917 से मार्च, 1918 के अनुभवों तथा कार्यों ने लेनिन की वरिष्ठ बुद्धि तथा यर्थाथाओ के प्रति युक्तियुक्त दृष्टि का प्रमाण दे दिया था, इसीलिए महत्वपूर्ण योजनाओं जैसे 1919 में कमइर्न्टन का स्थापत्य तथा 1920 से उसका कड़ा रूप विधान ऐसी ही एक पालिसी थी । यह तीसरी नई इन्टरनेशनल मार्क्स के आदि शिक्षण प्रालीतैरियत की डिक्टेटरशिप एवं सामाजिक क्रान्ति पर आधारित थी । अतएव यह स्वाभाविक ही विदित होता है कि विश्व क्रान्ति का मुख्यालय क्रेमलिन में ही रहे जो 'विजयी सोशलिज्म की धरती' था ।

तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय कमइर्न्टन ने लेनिन को रूसी समाजवादी क्रान्ति कार्यों के नेता के स्तर से उठा कर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का नेता बना दिया ! भले ही एक छोटे ग्रुप का हों उस समय की कठिनाइयों तथा समस्याओं का एक प्रत्यक्ष निश्चित तथा अटल समाधान लेनिन ने अपने ढंग से तैयार कर रखे थे। कमइर्न्टन प्रारंभ से ही आर्थिक संकट काल से आयात स्थिति से जुड़ी थी । 1938 में (फरवरी 8 से 28) हुई बैठक में इस पर टिप्पणी मिलती है । सरकार इस ओर से बिल्कुल उदासीन नहीं थी । इसका भी आभास होता है । कम्यूनिस्टों की सर्वप्रथम आकांक्षा यह भी थी कि पूंजीवादी देशों की गिरती आर्थिक स्थिति तथा कम्यूनिस्ट सोवियत यूनियन की पनपती स्थिति का मुकाबला दिखा कर आम जनता का हृदय जीत ले । कम्यूनिज़्म द्वारा विश्व विजय का स्वप्न भले ही दुर्लभ हो उसे त्यागना असम्भव लग रहा था । कम्यूनिस्ट वैसे तो जर्मनी तथा उसके मित्र अथवा संश्रित राष्टों के प्रति संराधक, समझौताकारी एवं विनम्र थे फिर भी चिचरिन ने स्पष्ट यह कह दिया था कि अन्य देशों के आन्तरिक मामलों में वे हस्तक्षेप न करने का वचन तो दे सकते हैं परन्तु प्राइवेट ढंग से यदि कोई अंग्रेज तथा

जर्मन प्रालीतैरियत से सम्बन्ध स्थापित करता है अथवा अपील करता है उसका निषेध हम न कर पायेंगे । कभी-कभी अर्न्तराष्ट्रीय मामलों की कमीसार भी प्रज्वलित भाषण दे डालती।

19.2.1 आ. कमइर्न्टन-सरंचना

कम्यूनिस्ट इन्टरनेशनल (कमइर्न्टन) का निर्माण बिना उसकी अंगभूत अन्य कम्यूनिस्ट पार्टियों के ही सम्पन्न हो गया । केवल रूस तथा निर्बल हंगरी की ही पार्टी इसमें आगे आई । रूस के अतिरिक्त सबसे महान कम्यूनिस्ट आन्दोलन जर्मनी में हुआ था फिर भी जर्मनी 1919 में रोजा लक्सेमबर्ग ने अपनी हत्या से पूर्व कमइर्न्टन की स्थापना का विरोध किया था । सिविल वार के समय जब पश्चिम से संचारण संप्रेषण तथा सम्बन्ध टूटे थे तकनीकी तकलीफें भी थी । यही कारण था कि प्रथम तृतीय कमइर्न्टन का रंग ढंग कुछ ओर ही था । कान्फ्रेन्स में केवल 35 डेलिगेट थे जिनमें अधिकतर रूसी थे । जिन्हें पार्टी की सेन्ट्रल कमीटी ने नियुक्त किया था, कि विदेशी डेलीगट बन जाए । सही मानो में केवल एक असली डेलीगेट था एबरलेन जो जर्मनी से आया था । कुछ अन्य डेलीगेट या तो वामपंथी सोशलिस्ट दलों के थे स्वीटजरलैंड, नार्वे, स्वीडन, फ्रान्स इत्यादि के अथवा निजी रूप से । जिनोवियव को इस नई संस्था का चेयरमैन नियुक्त किया गया जिनोवियव एक्जूकेटिव कमीटी का हेड नियुक्त हुआ तो रादेक कमीटी का सेक्रेटरी । जर्मन भाषा में वाद-विवाद हुआ जिसमें कट्टरपंथी सोशल डेमाक्रेटिक परम्पराओं, पार्लियामेन्ट्री, बुर्जुआ स्वतंत्रता पर प्रहार हुए । यह भी कहा गया कि सोवियत सत्ता की स्थापना ही प्रालीतैरियत शक्ति का सही आकार था । सोवियत सरकार के समान मजदूर वर्ग सत्तारूढ़ होने के पश्चात आर्थिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों का भी निर्माण करेगा उसी प्रकार जैसे रूस में है । अपनी अन्तर्राष्ट्रीय नीति घोषणा पत्र में भी यूरोप की प्रगति का मार्ग दर्शाया गया तथा कलोनियल क्षेत्रों (जैसे, एशिया व अफ्रीका) में यह जागरूकता पैदा करने की चेष्टा की गई कि यूरोप में प्रालीतैरियत की डिक्टेटर शिप सभी कलोनियल गुलामों के लिए स्वाधीनता का पैगाम लायेगा । कमइर्न्टन ने बहुत दिनों तक ग्रेट ब्रिटेन को सभी 'कैपिटलिस्ट,' शक्तियों का धुरी कहा जो एक को दूसरे के विरुद्ध लड़ा कर अपना मतलब सिद्ध करता है । जिस वातावरण तथा परिस्थितियों में तृतीय इन्टरनेशनल की उत्पत्ति हुई उससे यह निर्धारित हो गया कि कमइर्न्टन सोवियत सरकार का एक अधीन पर सहायक हिमायती शाखा है क्योंकि कम्यूनिज्म की विजय केवल रूस में थी । 1919 में रूस तथा हंगरी ने इनकी सफलता सामयिक थी । यह स्वभाविक था कि सोशलिज्म की जन्मभूमि के प्रति वफादारी ही अन्य ध्येय से बढ़कर है । यद्यपि कमइर्न्टन की शुरुआत में स्टालिन का प्रभाव उस पर कम मिलता है परन्तु 1922 तक कमइर्न्टन का यह राष्ट्र से अधिक महत्व इस सीमा तक बढ़ गया था कि रुस की कम्यूनिस्ट पार्टी में उठे वाद-विवाद या राज्य के आन्तरिक मतभेद भी कमइर्न्टन के सम्मुख रखे जा सकते थे । कमइर्न्टन द्वारा रूस की 'सुप्रनिशनल ' अर्थात 'मर्यादाराष्ट्रोत्तम' पोजीशन हो गई । डेमाक्रेटिक स्थिरता तथा शान्ति पूर्ण आर्थिक उन्नति एवं सामाजिक रिवीजनइज्म के इस दौर के यूरोप में क्रेमलिन की युद्ध तथा क्रान्ति का दूसरा हल्ला कैसे सम्भव था । इसीलिए यूरोप में कम्यूनिज्म के लिए यथावसर उत्पन्न करना ही था यदि मजदूरों की इच्छा से नहीं तो कैपिटलिज्म के पारस्परिक विरोधी तत्वों द्वारा।

19.3 कमइन्र्टन की प्रकृति एवं उदय

कमइन्र्टन की स्थापना के कारणों का ब्योरा देते हुए इतिहासकार कहते हैं कि द्वितीय इन्टरनेशनल अब युद्ध से चूर हो कर अपनों संस्था का पुर्ननियोजन चाह रही थी । यद्यपि समय अनुकुल न था फिर भी अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर आन्दोलन में सामाजिक, प्रजातंत्र की परम्परायें जोर पकड़ने लगी थी जिससे एक प्रतिस्पर्धा सी शुरू हो गई थी । लेनिन का विचार था कि द्वितीय इन्टरनेशनल के विलयन के पश्चात तीसरी इन्टरनेशनल में सम्मिलित होने के लिए कुछ ऐसे यूनीफॉम उसूल बनाएं जाएं जो सख्त भी हो युद्ध तथा रूसी क्रान्ति ने यूरोप को काफी हद तक रैडिकल कर दिया था जगह-जगह छोटी परन्तु खुदमुख्तार कम्यूनिस्ट पार्टियां उभर आईं थी ! परन्तु बाल्शविक उपलब्धियों ने कुछ इतनी धूम कर दी थी कि सभी मास्को के झन्डे तले ही आगे बढ़ रही थी । 1920 में सेराती ने कहा "मै क्या हूं लेनिन के मुकाबले-एक तुच्छ छोटी पार्टी का प्रतिनिधि-लेनिन तो क्रान्ति का नेता है ।" अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर कमइन्र्टन की शक्ति बढ़ाने के लिए एक और संस्था प्रोफइन्र्टन के नाम से शुरू की गई । लोजोव्सकी के नेतृत्व में यह कम्यूनिज़्म से प्रभावित एक इन्टरनेशनल ट्रेड यूनियन आन्दोलन था जिस के द्वारा पश्चिमी देशों में सुधारवादी ट्रेड यूनियनों का दखल हो सके । यद्यपि यह बहुत दिन तक चलती रही इसकी सफलता कुछ हद तक ही थी । दूसरी ऐसी ही संस्था थी क्रेस्टइन्र्टन जो किसानों की इन्टरनेशनल थी जिसकी स्थापना 1923 में कृषकों के आन्दोलनों में जान डालने के लिए की गई । चीन में कमइन्र्टन ने स्टालिन से प्रभावित होकर चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी कोमिनटॉग को सम्मलित होने एवं साथ देने की दावन दी । रूसी मिलिट्री एडवाइजर च्यांगकाइशेक की सहायता के लिए भेजे गए । पर स्टालिन की पालिसी विफल रही यद्यपि खुल्लम खुल्ला चीन तथा मास्को में कोई विच्छेद नही था । वैसे स्टालिन ने कभी इन्टरनेशनल की शक्ति तथा विदेशी कम्युनिस्टों को सम्पूर्ण रूप से भरोसेमन्द न समझा । वे दूसरी तथा तीसरी लाईन की स्पोट तो दे सकते थे और कुछ नही परन्तु लेनिन ने इसका उल्टा सोचा तथा कमइन्र्टन को ही महत्वपूर्ण समझता । स्टालिन उसे कट्टर रूप से देखता और यूरोप को दूर ही रखता कि 'सोशलिज्म एक ही देश में परन्तु 22 जून 1941 को सारी स्कीम पलट गई क्योंकि रूस को यूरोप के मामलों में उलझना ही पड़ गया । अब सोवियत यूनियन ब्रिटेन तथा अमरीका का सहायक बन जाने पर विवश हों गया । याल्टा कान्फ्रेन्स जो 4 फरवरी, 1945 में हुई उसने आने वाले कल का ब्यौरा दे दिया । सोवियत उपलब्धियों के चर्चे थे । 1943 में कमइन्र्टन की समाप्ति के साथ सोवियत अतीत का अलगाववाद समाप्त हो गया । अब सभी एक स्तर पर हो गये जो ओरियेन्टल अजनबीपन था उसके स्थान पर मार्कसिज़्म की दर्शनीय स्थिति सामने आई। एक नई सुबह का सपना देखा गया ।

प्रारंभ में कमइन्र्टन की एक्जेक्यूटिव कमीटी' कमइन्टर्न' कहला कर भी बाल्शविक पार्टी की केन्द्रीय दल का आन्तरिक अंश ही थी । लेनिन तथा उसके साथी 1919 की कमइन्र्टन की प्रथम मीटिंग की अनुपस्थितियों से तनिक भी मायूस न थे । वे चहुं और फैले सहस्त्रों क्रान्तिकारियों पर भरोसा रखते थे । लेनिन का विश्वास था कि जैसे ही तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय द्वारा आर्थिक सहायता, एजेन्ट तथा कार्य करने वाले मिले तो सभी कम्यूनिस्ट एकता के सूत्र

में बंध जाएंगे 15 महीनों बाद जब जुलाई 19, 1920 में तृतीय कमइर्न्टन की दूसरी बैठक हुई तो 49 देशों के प्रतिनिधि इसमें में आए जो नकली नहीं असली पार्टियों के प्रतिनिधि थे । द्वितीय कांग्रेस ही तृतीय कमइर्न्टन की सच्ची संस्थापक एवं व्यवस्थापक मीटिंग कही जा सकती है । आन्तरिक युद्ध के समय कमइर्न्टन की एकजेकेटिव कमीटी का केवल एक काम था- अलंकृत एलान करते, रहना, 1919-1920 तक अवसर भी थे और आकांक्षायें भी 1 मई 1920 की कमइर्न्टन का ऐलान था कि "1919 में महान कम्यूनिस्ट इन्टरनेशनल का जन्म हुआ । 1920 में महान अन्तर्राष्ट्रीय सोवियत रिपब्लिक का जन्म होगा । जब द्वितीय कांग्रेस जुलाई में इकट्ठी हुई तो सोवियत स्टेट को खतरा नहीं रह गया था और लाल सेना वारसां की ओर बढ़ रही थी ।

यद्यपि 1920 को द्वितीय काँग्रेस में बहुत प्रतिनिधि विदेशी थे पर अभी भी इतना आदर सम्मान लेनिन, ट्राय्स्की, जिनोवियव तथा रादेक का था कि कमइर्न्टन बालशविक पार्टी का ही एक अंग लगती थी । लेनिन ने इस कमइर्न्टन में, पालिसी निर्धारण भी किया ! जिसके अन्तर्गत कमइर्न्टन का कर्तव्य विश्व में चहुं और क्रान्ति लाना था । उसके विचार में विश्व क्रान्ति कोई ऐतिहासिक प्रक्रम नहीं था जिसके आने का समय निर्धारित हो बल्कि यह एक शीघ्र ही लाए जाने वाली प्रतिक्रिया थी जिसके लिए पार्लियामेन्ट्री संघर्ष, सोशलिज्म के लिए डेमाक्रेटिक तैयारियां वर्षों का निरन्तर प्रोपेगैन्डा जैसे पुराने तरीके नहीं बल्कि अत्यन्त उग्रवादी युयुत्स विशिष्ट वर्ग चाहिये था जो सुधारो सहित राष्ट्र निर्माण के लिए वचन बद्ध हो । यह सामान्य राजनैतिक तरीकों द्वारा कम्युनिस्ट क्रान्ति की तैयारी भी करतें तथा मजदूर आन्दोलन की आन्तरिक द्न्दों का लाभ उठाये । बड़ी-बड़ी सोशलिस्ट पार्टी को तोड़ कर उनके लीडरों ने जनता में फूट डाल कर कम्यूनिस्ट सत्ता बढ़ायें और नई पार्टी पुरानी टुकडियों से बनाये ।

19.4 कोमिन्टर्न की नीतियां

लेनिन तथा जिनोवियव ने इसी प्रकार के कुछ बुनियादी उसूल बनाये जो द्वितीय बैठक के 21 सूत्रीय शर्तें कही जाती है । इसका महत्व कमइर्न्टन के संदर्भ में बहुत है ।

19.4.1 अ. 21 सूत्रीय प्रलेख

21 सूत्रीय प्रलेख की प्रथम 20 धारायें स्वयं लेनिन ने लिखी थी । इसके अन्तर्गत सभी सोशलिस्ट अथवा अन्य दल कमइर्न्टन में मिल सकते थे । पहली दो इन्टरनेशनल में भी विभिन्न दलों को मिलने की इजाजत थी पर उसके लिए कमइर्न्टन के प्रोग्राम तथा टैक्टिक्ज अपनानी आवश्यक थी यह नई कम्यूनिस्ट संस्थाओं पर अब लागू नहीं रहा । तृतीय इन्टरनेशनल ज्वाइन करने कें लिए पार्टी को सख्त टेस्ट पास करने होते और 21 शर्तों को फारमूला मानना होता अर्थात उन्हें यह प्रण लेना होता कि सभी धोखेबाज साजिशी क्रान्ति विरोधी तत्वों को अलग कर दें, और एक ऐसी सीक्रेट आर्गेनिजेशन बनाये जो सरकारी तथा कानूनी तौर पर मान्यता रखने वाली संस्थाओं के साथ-साथ कार्य करें तथा क्रान्ति की चेष्टा कर सके । इसके लिए भी सोवियत यूनियन का नेतृत्व मानकर चलना आवश्यक था । इस प्रकार लेनिन, जिनोवियव, रादेक तथा अन्य नेताओं एवं 21 सूत्रीय फारमूले का एक ही विचार

परिचायक था कि रूस को आदर्श माना जाए न केवल प्रबन्धात्मक विचारात्मक दृष्टि से बल्कि नीतियों तथा दांवपेंच में भी । इससे पाश्चात्य कम्यूनिस्टों पर अंकुश बना रहा । 21 सूत्रीय फारमूले की चौदहवीं धारा में था कि "सभी कम्यूनिस्ट पाटियों को सोवियत सभी रिपब्लिकों को अप्रतिबन्धित संरक्षण तथा समर्थन देना चाहिए कि वे क्रान्ति विरोधी शक्तियों से निपट सके " दाखिले की इच्छुक सभी पार्टियों को प्राचीन सोशल डेमाक्रेटिक परम्पराओं तथा उद्देश्यों व पोस्टों से दूर रहना था । इस प्रकार सोवियत सत्ता की फैलाने में कमइर्न्टन की गतिविधियों तथा चिचरिन, लितविनोव तथा अन्य साथियों के कार्यों की बहुत दखल है । 1920 सें सोवियत बाल्शविकों की राजनैतिक तथा मिलिट्री महत्व बहुत बढ़ गया । समस्त विश्व के कम्यूनिस्टों के लिए कमइर्न्टन एक पवित्र स्थल के समान हो गया । डेलीगेशन,हमदर्द तीर्थयात्रियों के समान दूर दूर से आने लगे । सभी यूरोपीय सोशलिस्ट पार्टियों के प्रतिनिधि जर्मन सोशलिस्ट, फ्रांसीसी, स्पैनिश, इटैलियन, चेकोस्लोवाकियन, पालिश सभी सोशलिस्ट पार्टियों से, कम्यूनिस्ट पार्टियों, ट्रेड यूनियनों से लोग आए । कमइर्न्टन के एजेन्ट भी वही गए जो महंगे हीरे ले गए तथा दौलत भी ! उन्हे बहुत पावर भी दिया गया कि मजदूरों की क्रान्ति फैला सके । फिर भी कुछ ऐसै कमइर्न्टन के एजेन्ट भी थे जो, कम्यूनिज़्म से मोह निवारण के पश्चात अपनी आत्मकथा में बहुत कुछ निट्टी जैसे चालाक राजनीतिज्ञों के प्रति लिख गए हैं, इटली में निट्टी की हरकतों ने पार्टी में विभाजन भी कर दिया । कमइर्न्टन का रोल जर्मनी में भी महत्वपूर्ण था जहां न केवल इन्डेपेन्डेन्ट सोशलिस्ट पार्टी का विभाजन हो गया बल्कि एक जन कम्यूनिस्ट पार्टी तथा क्रान्तिकारी महत्वाकांक्षाएं भी जागृत हुई । अन्य देशों में भी बाल्शविकों का प्रभाव बढ़ता गया । 1920 से द्वितीय विश्व युद्ध तक स्वीडन, डेनमार्क, हालेंड, बेलजियम, फ्रान्स, नार्वे, स्विट्जरलैंड, इटली, रूमानिया, पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया, यूगोस्लाविया, आस्ट्रीया, स्पेन, यूनाइटेड स्टेटस, अर्जेन्टीना, ब्राजील एवं सभी अन्य स्थानों पर सोशलिस्ट दलों में दरार पड़ गई तथा विभाजन हो गया ।

कमइर्न्टन तथा उसके अन्य अंग एक प्रकार से सोवियत सरकार के हाथ में एक आज्ञाकारी हथियार बन गए । जियानोवियव, बुखारिन, मैनुल्स्की, द्विमित्रोव, स्टालिन इत्यादि द्वार क्रेमलिन यह तय करती रही कि किस दल का कौन अध्यक्ष होगा और इसमें वे स्थानीय स्थिति से अनभिज्ञ होने के कारण छोटे-छोटे नेताओं कों बड़ी पदवी दे डालने, सदस्यों को पार्टी सें बहिष्कृत करने इत्यादि कार्य भी कर डालते । क्रेमलिन दल के दांवपेंच तुय करती और उसमें बदले हुए शक्तियों के संतुलन कों न देखते हुए और मनभेदों की ओर से उदासीनता बरतते हुए पार्टियों से बर्ताव करती । यह पार्टियाँ आर्थिक तथा तकनीकी सहायता के लिए पूर्ण रूप से क्रेमलिन पर निर्भर थी और उसकी इच्छा ही उनका आदेश था । इस प्रकार कमइर्न्टन पूर्ण रूप से बाल्शविक नेताओं की इच्छाओं की योजना बनाने तथा हितों की रक्षा करने वाली संस्था थी।

सोवियत यूनियन के आलोचक कहते हैं कि कमइर्न्टन का इतिहास उसकी स्थापना से लेकर स्टालिन द्वारा 1943 में उसके अन्त तक एक लम्बी श्रंखला गलतियों, पराजय तथा विफलताओं की विदित होती है जिसने विश्व की प्रालीतैरियत को 'मिथ्यापूर्ण ' कम्यूनिस्ट क्रान्ति की ओर बढ़ने में कुछ सहायता नही की और अपनी साजिशों तथा विरोधी नीतियों द्वारा

विश्व की प्रालीतैरियत को निर्बल कर दिया और 1920 से द्वितीय विश्व युद्ध तक उसकी प्रगति को रोक दिया । कमइर्न्टन के उदय ने सोशलिस्ट पार्टियों को अपनी श्रेणियां बन्द करने तथा 1890 को एंगेल्ज़ के मार्कसिज्म से स्वयं को जोड़ने पर बाध्य किया क्योंकि अब एंगेल्ज के शिष्य कौत्सकी, बर्नस्टाइन तथा राजा लक्सेमबर्ग भी इसके हामी थे । जबसे पांचवी काँग्रेस ने सभी दलों को एक बन्धन में एक सूत्र में बांधा था बिना किसी शर्तों के तो उसके सभी कार्यों का अधीक्षण तथा संचालन अपने हाथ में करके यह भी अधिकार ले लिया कि अन्य देशों के कम्यूनिस्टों के दल के जिस निर्णय को चाहे रद कर दे तथा जिस सदस्य कों चाहे बहिष्कृत कर दें ।

19.4.2 यूनाईटेड फ्रन्ट

मार्च, 1921 में जर्मनी में कम्यूनिस्ट पुत्श की विफलता के पश्चात कमइर्न्टन ने 'यूनाईटेड फ्रन्ट' की रचना की ताकि जर्मन कम्यूनिस्ट पार्टी को पूर्ण राजनैतिक तथा नैतिक अलगाव से छुटकारा दिला सकें लेनिन ने अपनी स्पष्टवादी नीति से कहा "उद्देश्य यह था कि जर्मन कम्यूनिस्ट पार्टी को सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दे जहाँ से स्वतंत्रता सें सुधारकों की जायदाद अर्थात मजदूरों को सम्बोंधित कर सकें । वियना ऐसोसिएशन ने बाल्शविक योजना को समझा तथा तीनों इन्टरनेशनलों में भाग लेने की सहमति दी । उन्होने द्वितीय इन्टरनेशनल को भी मना लिया । बर्लिन के तजुरबे के पश्चात वियना तथा द्वितीय इन्टरनेशनल से दोनों की घनिष्ठता बड़ी । एक संयुक्त कमेटी जिसमें 5 प्रतिनिधि वियना इन्टरनेशनल के तथा 5 द्वितीय इन्टरनेशनल के मिले और एक नई यूनाइटेड इन्टरनेशनल ऐसोसिएशन मई, 1923 में बनी जो एल एल आई अर्थात 'लेबर एस सोशलिस्ट इन्टरनेशल ' कहलाई । यह हैमबर्ग इन्टरनेशनल 28 देशों की सोशलिस्ट पार्टी से मिल कर बनी थी । फरवरी, 1933 में स्वतंत्र वामपंथी मोर्चोके प्रतिनिधियों (ब्रिटिश, जर्मन, फ्रांसीसी, पालिश, इटालियन, नार्वेजियन एवं नीदरलैंड) की पैरिस में बैठक हुई जिसमें, फासिज्म के विरुद्ध एक प्रालीतैरियन संघर्ष का आह्वान हुआ !

19.5.1 कमइर्न्टन तथा विदेशी नीतियां

बेस्ट लेतोविस्क की सन्धि के पश्चात पूंजीवादी देशों के प्रति सोवियत सरकार के दो विभिन्न उद्देश्य थे : (1) पूंजीवादी देशों में क्रान्तिकारी योजना को सफल बनाना (2) राजनैतिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं के अन्तर्गत उन देशों सें सामान्य सम्बन्ध बनाए रखना । इन्हीं दोनों उद्देश्यों के बीच समझौता करके और अपने हितों की रक्षा करते हुए चलने में भलाई थी-यही सोवियत विदेश नीति का आधार था जिसके दो मुख्य अवयव अथवा हथियार थे (1) कम्यूनिस्ट इन्टरनेशनल, (कमइर्न्टन अथवा अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट संस्था) एंव (2) पीपल्स कमीसारियत आफ फारेन अफेयर्स नरकोमिन्डल-विदेशी मामलों की जनतंत्र कमीटी) बहुत सी निरन्तर घटी घटनाओं से (जैसे अक्तूबर, 1923 में जर्मन विद्रोह का दमन, 1924 तथा 1925 में एस्टोनिया, बुलगेरिया इत्यादि में असफलतायें तथा 1927 में चीन में असफलता) क्रान्ति का

सपना उतना विशेष तथा मोह का नहीं रह गया था । क्रान्ति विश्व के स्तर पर लाने पर ही अब सोवियत यूनियन का अस्तित्व नहीं निर्भर था । न ही अब यह पहली शर्त रह गई थी । सोवियत यूनियन द्वारा निर्मित यह दोनों संस्थायें यद्यपि एक ही ध्येय, एक ही उद्देश्य रखनी थी परन्तु उनकी कार्य प्रणाली में अवश्य अन्तर था और उससे पेचीदगी भी पैदा हुई जो हिटलर के शक्तिशाली होने से और भी बढ़ती गई । आन्तरिक तथा बाह्य सभी तत्व अपने-अपने ढंग से उभर रहे थे । एक ओर गर्म दल कट्टरपंथियों का कहना था कि विदेशी कम्युनिष्ट अपने-अपने देशों में क्रान्ति का हव्वा खड़ा कर अपनी-अपनी सब सरकारों को सोवियत यूनियन के विरुद्ध जाने से रोक सकते है । प्रारम्भ में नर्म दल इसका विरोध तो खुल्लम खुल्लम नहीं कर सका पर धीरे-धीरे यह विचार व्यक्त करने लगा कि कप्यूनिस्ट पार्टियां अन्य वामपंथी दलों के साथ सहयोग द्वारा बुर्जुआ तथा फासिस्ट सरकारों का विरोध कर सकती है भले ही वह कम्यूनिज्म या क्रान्ति को लाने का स्वप्न देखें ! इन दोनों प्रतिरोधी विचार धाराओं के मध्य समझौता बहुत कठिन था । 1928 में बुखारिन (जो कमइन्टर्न का अन्तिम शक्तिशाली हैड था) को हटाया गया । फिन, कमइर्न्टन के अन्तर्राष्ट्रीय चक्र का प्रतिनिधि था और मनुइल्स्की रूसी पार्टी की सेन्ट्रल कमीटी का प्रतिनिधि था । दोनों की सुनभ्य नमनशील व्यक्ति थे । मनुइल्स्क का कोई जोर कमइर्स्टन पर नहीं चला । मलातव, जो स्टालिन का मुखिया था कमइर्न्टन जैसी संस्थाओं की राजनीति पर उतनी तवज्जों नही देता था । फिर भी कमइर्न्टन विश्व स्तर पर महत्वपूर्ण अंग थी ।

विदेशी कम्यूनिस्टों के 'बाल्शवीकरण' का प्रारंभ 1920 के '21 धाराओं वाले सिद्धांतों' से हुआ ! इसका एलान 1924 की पांचवीं कांग्रेस में हुआ और यह स्टालिन की तानाशाही के जमाने से अत्यधिक जोर पकड़ गया । 1929 के अन्त तक कभी-कभी जर्मन,फ्रान्सीसी, पालिश, चेकोस्लोवाकिया, ब्रिटिश तथा अमरीकन पाटियों के बीच तनावपूर्ण स्थिति थी। प्रतिस्पर्धा एवं द्वन्द्व पारस्परिक रूप से जब तब उनके मध्य भी बढ़ जाता पर ऐसी स्थिति में कमइर्न्टन का निर्णय उन पर हावी रहता । भले ही किसी को नेतृत्व से हटाना पड़े या पार्टी से निकालना पड़े, शान्ति की स्थापना तथा पार्टी की सुदृढ़ता के लिए यह आवश्यक था । सभी स्थानों की पार्टियां पारस्परिक अवश्यकरणीय कर्तव्यों सें बंधी थी जिनका एक उद्देश्य महत्वपूर्ण यह भी था कि कम्यूनिस्ट रूस को कम्यूनिज्म के शत्रुओं से सुरक्षित रखें । फ्रान्सीसी, आस्ट्रियन (तथा कुछ अनचाहे ढंग से सही ब्रिटेन भी) किसी हद तक नर्म ग्रुप के थे । जर्मन विभाजित थे, क्योंकि कुछ कम्यूनिस्ट थे कुछ सोशल डेमाक्रेटिक लीडर तथा उनके अनुयायी । दोनों ग्रुप हिटलर के भय से ग्रस्त होकर भी एक नहीं हों सके । इटली तथा पोलैंड में गैरकानूनी तथा फांसी देने वाला अपराध में आता था कम्यूनिज्म-वहाँ स्थिति दूसरी थी । आन्तरिक द्वन्द्व भी चलता रहता था मास्को द्वारा दी गई स्वतंत्रता के कारण सदस्यों को पारस्परिक विचारों की अभिव्यक्ति व आदान प्रदान की छूट थी और एक जैसी नीतियाँ भी न थी । किसी एक महान शक्ति की सत्ता के अन्तर्गत न रही थी । कमइर्न्टन तथा उसकी सहकारी सहयोगी अनुयायी पार्टियों को 1930 में एक रंगी अथवा एकाश्मक पार्टी कहना सही न होगा।

19.5.2 विदेशी नीति में पारस्परिक सम्बन्धों का विश्लेषण

जर्मनी द्वारा मार्च, 1939 में राइनलैंड पर आधिपत्य के समय से लेकर सितम्बर, 1938 के म्यूनिख़ संकट तक का समय अपना एक ऐतिहासिक महत्व रखता है जो उसे एक स्वरूप देता है । 3 वर्ष से सोवियत सरकार की विदेशी नीति गैर कम्यूनिस्ट देशों के प्रति सहयोग तथा मित्रता की थी। जिसमें यूरोपियन तथा विश्व शान्ति के लिए एक 'सामूहिक सुरक्षा' की नीति प्रारंभ की गई जिसके अन्तर्गत 3 प्रकार के राजनैतिक सम्बन्ध बनाए गए : (1) ऐसे सारे देश जिन्होंने रूस को मान्यता नही दी थी (जैसे अमरीका) उनसे सामान्य राजनैतिक सम्बन्ध बनाने की चेष्टा की (2) सोवियत यूनियन लीग आफ नेशन मे दाखिल हुआ तथा उसके प्रतिज्ञा पत्र का पालन जो इटालियन यूरोपियन द्वन्द्व में भी हुआ था और अब औपचारिक रूप से विधिवत पालन होना था (3) प्रतिज्ञापत्र की कुछ निहित दुर्बलतायें दूर करने कें लिए पारस्परिक सहायता के लिए कुछ अन्य स्थानीय स्तर के समझौते भी किए। परन्तु इससे सीमित सफलता ही प्राप्त हुई जैसे फ्रांस, चेकोस्लोवाकिया का एग्रीमेन्ट। इसी प्रकार कम्यूनिस्ट इन्टरनेशनल (जिस में रूसी कम्यूनिस्ट पार्टी ही प्रभावी थी) ने 'सर्वप्रिय मोर्चा' (पापुलर फ्रांस अर्थात सभी देशों में ऐसी सारी शक्तियों का संगठन जो फासिज्म के विरुद्ध थी तथा आन्तरिक एवं बाह्य सभी पालिसी में फासिस्ट तथा, नेशनल सोशलिस्ट स्टेट के विरुद्ध थी) का संगठन किया । 1936-38 के बीच जो आशाएं इस सुरक्षा प्रबन्ध से जोड़ी गई थी वह छूट गई । जर्मनी की बढ़ती हुई पुन: शस्त्रीकरण तथा 'कमइर्न्टन' विरोधी सन्धि (जो जर्मनी तथा जापान ने 25 नवम्बर, 1936 में की और इटली 1937 में शामिल हुई) से सोवियत यूनियन के लिए खतरा बढ़ा । फिर भी द्वितीय पंचवर्षीय योजना तथा 1936 में अपनाया गया स्टालिन का संविधान रूस की स्थिति को सुदृढ़ करने में सफल रहा । इस समय कमइर्न्टन की कार्यप्रणाली सातवीं आल यूनियन कांग्रेस आफ सोवियत (28 जनवरी, 6 फरवरी, 1935) के फैसलों से तय होती थी । जैसाकि जनरल सेक्रेटरी दिमित्रोव ने कहा कि इस समय दो मुखी संघर्ष था-एक फासिज्म के विरुद्ध-एक लड़ाइयों के विरुद्ध। पर इन दोनो संघर्षों को रंग देना था प्रत्येक देश की स्थिति के अनुसार भले ही हथियार एक जैसे हो-जनसमूह द्वारा। इस जनसमूह रूपी हथियार के प्रयोग के, दो तरीके थे एक तो 'सामूहिक मोर्चे' द्वारा जिसमें पार्टी के सभी मेम्बर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सामूहिक प्रयास कर सके,दूसरा कम्यूनिस्ट इन्टरनेशनल के संगठन द्वारा तथा द्वितीय इन्टरनेशनल द्वारा। इन्हीं का प्रयोग कर प्रत्येक देश में एन्टी फासिस्ट फ्रन्ट तैयार करे ! इस प्रकार यूनाइटेड फ्रन्ट केवल प्रालीतैरियत संगठन था जबकि पापुलर फ्रन्ट की यह सीमायें नहीं थी । फिर भी कम्यूनिस्टों ने अपनी मार्क्सवाद की आत्मनिर्भर आन्दोलन व उस के प्रचार-प्रसार को नहीं छोड़ा तथा ट्रेड यूनियनों की, एकता पर बल देते, हुए उसे कम्यूनिस्टों के अधीन रखने पर जोर दिया। इन सभी प्रयासों में केवल एक ही उद्देश्य निहित था एक अप्रत्यक्ष मकसद कि सभी कम्यूनिस्ट पार्टियों को सुदृढ़ करना तथा अन्य वामपंथी दलों को कमजोर करना। यही दोहरी नीति कमइन्टर्न की नाकामी का असली कारण बनी । क्योंकि प्रालीतैरियत के हितों की सुरक्षा सोवियत यूनियन की विदेशी नीति के अन्तर्गत ही रही और उस पर कुरबान भी की जा सकती

थी । अतएव कम्यूनिस्ट एक ओर तथा फ्रांसीसी वामापंथी सोशलिस्टों, आस्ट्रेलियन सोशलिस्टों तथा ब्रिट्रिस लेबर पार्टी दूसरी ओर एक दूसरे के विरुद्ध हो गए। पापुलर फ्रन्ट के इस दौर में वामपंथी युवा संगठन तथा अन्य अराजनैतिक पार्टियों पर कम्यूनिस्ट ही छा गए।

कमइन्टर्न के बयानों में विदेशी नीति पर बहूत जोर था पर अन्तर्राष्टीय दशा 1914 से अब तक बहुत बदल चुकी थी । सोवियत यूनियन का विक्तिवाद भी बहुत बढ़ गया था । स्पेन तथा फ्रांस में एक छोटी सी अवधि, में पापुलर फ्रन्टस की सफलता से मास्को तथा अन्य शक्तियों को कोई गलतफहमी नहीं थी । डेवीज का कथन था कि कमइर्न्टन ही ऐसा मुद्दा था जिस पर सोवियत यूनियन तथा अमरीका के बीच विवाद हो सकता था क्योंकि यह भय कि सोवियत यूनियन कमइर्न्टन का अपनी सैन्य शक्ति का अनुबन्ध समझ रहा है कुछ कम न था। कम्यूनिस्ट पार्टी की सदस्य संख्या सोवियत यूनियन के बाहर 1934 के 86000 से बढ़ कर 9200000 हो गई थी। जब सोवियत यूनियन राष्ट्र संघ का सदस्य था तथा 'सामूहिक सुरक्षा' तथा शान्ति अखिर, अटल है' का अनुयायी था तो विचार ऐसा था कि सोविय, यूनियन तथा पश्चिमी गणतंत्रों का उद्देश्य एक ही था यानी स्थिरता, मानवता की भलाई तथा आर्थिक जीवन पर नियन्त्रण जिसके लिए विभिन्न विचार धारायें व सिद्धान्त प्रचलित हो गए।

कमइर्न्टन- की सामूहिक सुरक्षा की अवधि में ग्रहण लगा और उस संगठन का विधटन एवं अंत हुआ। 22 मई, 943 को जब यह सभी पर स्पष्ट हो गया कि सोवियत यूनियन की नीति अपने राजनैतिक दलो की सुरक्षा थी, 1945 में जब तोगलियाती, दिमित्रव, थोरेज जैसे लोग विश्व स्तर पर उभरे तो उन्होनें मास्को में रहने वाले विदेशी कम्यूनिस्टों के अस्तिस्व को केवल घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करने वाला नहीं समझा बल्कि कुछ दूसरे, उद्देश्य भी उसमें उभरे। यह ऐतिहासिक रूप से सिद्ध हो चुका है कि कम्यूनिस्ट पार्टी फ्रान्स तथा चीन या अन्य देशों में सोवियत यूनियन के आदेशों का पालन नही करती थी । फिर भी यूरोप की प्रगति में वंशानुगत विर्वघन तथा धार्मिक जोश कुछ इस प्रकार से गडमड था कि उसका प्रारंभ तथा अन्त समझना दुर्लभ था । 1917 की रूसी मार्क्सवादी सन्धि के पश्चात. शक्ति तथा अपने राज्य का संगठन तथा उसको सुरक्षित रखना सब प्रकार की महत्वाकांक्षाओं से बड़ा ध्येय था ! जब तक गैर साम्यवादी राज्य बाकी थे कम्यूनिस्ट स्टेट को खतरा बना था क्योंकि सोवियत यूनियन में तो प्रौलीतैरियत क्रांति अतीत की बात थी परन्तु अन्य देशों का तो यह भविष्य था। इसी लिए बालशेविक का बाह्य देशों के प्रति एक उद्देश्य था कि ब्रस्टलीतोव्स्क की सन्धि का सम्मान तथा यह विचार कि चाहे जो भी हो कितनी जानों या स्थानों का नुकसान क्यों न हो पर बाल्शेविक आशा के प्रतीक के रूप में कम से कम एक स्टेट को जीविन रखना आवश्यक है द्वितीय कांग्रेस से पहले लेनिन ने कहा रूस की क्रान्ति तमाम अन्य देशों के कम्यूनिस्टों के लिए एक मार्गदर्शक देश है । लेनिन ने अपनी 'लेफ्ट कम्यूनिज्म चाइलडिश डिजीब आफ कम्यूनिज्म" मे विदेशियों को इस मुद्दे को लेकर उधेडाढा भी कि वे संसदीय संस्थाओ में मिले अवसरों का भी लाभ नहीं उठाते। ब्रिट्रिश कम्यूनिज्म पार्टी को लेबर पार्टी की ओर झुकाव' अच्छा न लगता था।

कमइर्न्टन का यह जकडजामा पाश्चात्य संसार के उग्रवादी सोशलिस्टों को नहीं भाया। ऐसी क्रांतिकारी उग्रवादिता हालात को पेचीदा भी कर देती क्योंकि मजदूर वर्ग के लिए जीवन का

आधार दर्शन मात्र नही बल्कि अपने हित तथा जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति थी । लेनिन का कहना था कि आखिर रूस में भी तो क्रान्ति के लिए मजदूर वर्ग झेला था तो क्या अन्य देशों के कम्यूनिस्ट नहीं झेल सकते'। विदेशी कम्यूनिस्टों को भी अपनी सफलताओं तथा सहायता के लिए भी मनोवैज्ञानिक तथा व्यवस्थापन के लिए भी सोवियत यूनियन पर निर्भर रहना पड़ता क्योंकि अपने देश में वे राजनैतिक अलगाव में जीते थे जहां शीघ्र सफलताओं की उम्मीद न थी।

सोवियत यूनियन की बढ़ती हुई शक्ति तथा अन्य देशों का उस पर निर्भर होना स्वाभाविक ही था । सोवियत यूनियन के ऊपर बढ़ती हुई इस निर्भरता के विरुद्ध द्वितीय कांग्रेस ने आवाज उठाई। एक डच कम्यूनिस्ट ने कहा कि कमइर्न्टन को किसी और देश में तबादला करना चाहिए। जैसा कि 1919 में योजना बनी थी। यदि कमइर्न्टन केवल मास्को में ही स्थित रही तो यह अभिनय नही करना .चाहिए कि कमइर्न्टन की आत्मा अन्तर्राष्ट्रीय आवरण लें पाएगी और विदेशी कम्यूनिस्ट जो इसकी कार्यकारिणी पर हैं अपने देश की' दशा से अपरिचित तथा अनभिज्ञ रहेगें । फिर भी यह विचार कि अंतर्राष्ट्रीय क्रान्ति बिना किसी केन्द्रीयकरण के तथा संगठन के न हो पाएगी, बना रहा। सोवियत यूनियन का सरकारी विचार (मुख्यत : चिचरिन द्वारा मुखरित) था कि कमइर्न्टन एक प्राईवेट इटरनेशनल संस्था है और मास्को के आदेशों पर कतई भी आधारित नहीं। कुछ ऐसे भी लोग ग्रेट ब्रिटेन, फ्रान्स इत्यादि में थे जो बाल्शविकों के बाल्शविज्म को पश्चिमी देशों की सभ्यता का 'शत्रु, मानते जिसकी तबाही आवश्यक थी। वैसे भी कुछ श्वेत रूसी संस्थायें, तथा रिफ्यूजी.एजेन्ट सोवियत यूनियन के विरुद्ध भी काम कर' रहे थे। 1920 के पश्चात कम्यूनिज्म 1930 तक रूस की सत्ता में हीं रहा भले ही ट्राटस्की तथा बुखारिन जेसे मशहूर लोग छोड़ गए हो।

कम्यूनिस्ट इन्टरनेशनल यूरोप एवं अन्य स्थानों पर मजदूर वर्ग के एक बडे वर्ग को हथियाने में विफल रही । दोनों विश्वयुद्ध के मध्य कम्यूनिस्ट अल्पसंख्या में प्रत्येक देश में रहे। किसी भी देश में क्रान्ति नहीं लाई जा सकी विशेषत : 1925-30 में जबकि पूंजीवादी स्थिरता का दौर था। सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में हैमबर्ग इन्टरनेशनल एवं इन्टरनेशनल फिडरेशन आफ ट्रेड यूनियन (जिसे बाल्शविक एम्सटरड़म इन्टरनेशनल कहते थे) ने मजदूर वर्ग के लिए ज्यादा से ज्यादा असरदार हालात पैदा करेने की चेष्टा की 1925 की मारसाईल कांग्रेस तथा 1928 की ब्रसल काँग्रेस से यह सिद्ध होता है कि डेमाक्रेटिक सोशलिज्म यूरोप में बढ़ रहा था और शक्तिशाली बन रहा था।

19.6 कमइर्न्टन का अन्त

कमइर्न्टन का विलयन 1943 में यह कह कर दिया गया कि कमइर्न्टन अपनी उपयोगिता की अवधि पूरी हो चुका है और प्रत्येक यूनिट को विदेशों में ज्यादा अधिक स्वाधीनता होनी चाहिए। स्टालिन ने अपने साक्षात्कार में इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए यह कहा कि अब यह कहा कि मास्को द्वारा सब देशों के कम्यूनिस्टों को आदेश मिलते है समाप्त हों जाएगा तथा हिटलर के विरुद्ध ज्यादा विस्तार से नेशनल फ्रन्ट का कार्य चलेगा । कुछ इतिहासकार इस ऐलान को ढोंग बताते हुए कहते है कि अन्य देशों की बड़ी कम्यूनिस्ट पार्टी में मास्को के प्रति

आज्ञाकारिता की जड़े गहरी हों चुकी थी अब ऐसे बाह्य प्रत्यक्ष चिन्हों की आवश्यकता नहीं । राष्ट्रीय स्तर पर कप्यूनिस्टों के संघर्षों का दौर समाप्त हो चुका था और यह एक प्रकार का भ्रमजनक' छलावा सा लगता था । कमइर्न्टन के अन्त के दो पहलू और थे एक तो मास्को को युद्ध के पश्चात की स्थिति में विश्व में नये साथी ढूंढने थे । अपनी 'सैटेलाइट रियासतों' को सोवियती बनानें की कठिनाइयां और इन दोनों मसलों के लिए किए गए समझौते । यह खतरा बना था कि विदेशी कम्यूनिस्टों की 1939 से पूर्व की वफादारी फिर न जाग पड़े उत्तर युद्ध कालीन विश्व में अमरीका के बाहर कम्यूनिज्म का विस्तार तथा कम्यूनिस्ट शक्तियों का उदय अब दूसरा वातावरण पेश कर रहा था । 1919 में जब कमइर्न्टन बनी थी तो सोवियत यूनियन मानों धागे सें लटकता एक देश था और क्रान्ति की आशा मात्र ही यूरोप में दिखाई पड़ रही थी पर अब सोवियत यूनियन एक महान शक्ति था और उसी की सफलता का प्रतिबिम्ब चहुं ओर था जिसकी सुरक्षा की अब पहले जैसी आवश्यकता न थी। सोवियत यूनियन के, दो मसलें थे एक सह-आस्तित्व तथा द्वारा विस्तार का । अब उत्तर युद्ध काल में एक नई विदेशी नीति (जो, आन्तरिक आवश्यकता तथा मसलों पर आधारित थी) की जरूरत थी । अमरीका की बढ़ती शक्ति से भी खतरा था ।

यह भी कहा गया कि कमइर्न्टन का विलयन पाश्चात्य देशों कें प्रति एक तुष्टीकरण नीति थी। कम्यूनिस्ट भी, रूस की महत्ता समझ कर भी कुछ तों आत्मनिर्भरता स्वयं के लिए भी चाहते थे, स्वाधीनता के इच्छुक थे । मास्कों भी समझ चुका था कि दोहरी नीति में खतरा है । हिटलर तो मास्को की वचनबद्धना तथा प्रतिज्ञता को नही समझ सकता था और विदेशी कम्यूनिस्ट ही ज्यादा मुखर व शक्तिशाली समर्थक थे और जर्मनी का विरोध कर सकते थे । कमइर्न्टन का इस प्रकार ऐसे समाधान तलाश करने का प्रयास था कि जिससे स्वयं उसका आधिपत्य बना रहे । सोवियत यूनियन से सभी भयभीत रहें तथा हिटलर एवं पश्चिमी देशों के मध्य शान्ति की पुनर्स्थापना हो सके।

सोवियत यूनियन कें नागरिक कहते है कि सोवियत विदेश नीति कमइर्न्टन के अस्तित्व तथा उसके रूस द्वारा नियंत्रित किए जाने पर निर्धारित थी ऐसी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती। यद्यपि 16 वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड, फ्रान्स से मित्रता गांठ कर भी स्पेन की (किसी प्रकार वहां की सरकार कें विरुद्ध) कैथोलिक पार्टियों की सहायता करता था परन्तु यह भी उतना आन्तरिक उपद्रव नहीं फैला सका जितना आन्तरिक उच्छेदन व उलट-पलट रूस के (1914 से पूर्व यूरोप में कम ऐसा होता था) कमइर्न्टन द्वारा हुआ। 19 वीं शताब्दी के अमरीका ने आयरिश क्रान्तिकारियों को पनाह दी, लन्दन, पैरिस, मास्को विरोधियों शरणस्थली भी यही देश रहा । परन्तु वहां की सरकार ने सीधे रूप सें कोई ऐसा षड्यंत्र नहीं रचा जैसा तृतीय इन्टरनेशनल ने । सोवियत सरकार का कथन था कि कमइर्न्टन एक प्राइवेट सामाजिक संस्था थी जिसकी गतिविधियों का सोवियत सरकार से न कोई वास्ता था न ही सोवियत सरकार के आदेशाधीन थी।

19.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ई एच. कार-इण्टरनेशनल रिलेशन विटविन टू वर्ल्ड वार्स (हिन्दी में उएलब्ध)

2. दीनानाथ वर्मा-अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, (1919-45)
3. जार्ज वर्नादस्की-रूस का इतिहास
4. पार्मर एण्ड पार्किन्स-इण्टरनेशनल रिलेंसन्स

इकाई - 20
फासिस्ट राज्य

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.1.1 फासीवाद और मुसोलिनी

20.1.2 मुसोलिनी का परिचय

20.2 फासिस्ट राज्य का स्वरूप

20.2.1 राष्ट्र राज्य की सर्वोच्चता

20.3 फासिस्ट दल

20.3.1 फासिस्ट दल का संगठन

20.3.2 फासिवाद की महासभा

20.4 व्यक्ति और समाज

20.5 आर्थिक व्यवस्था व निगम

20.5.1 पूर्ण केन्द्रीकृत अर्थव्यवस्था

20.5.2 निगम

20.5.3 श्रमिक न्यायालय

20.5.4 आर्थिक संसद

20.6 शान्ति विरोधी युद्ध समर्थक

20.7 नात्सीवाद

20.8 नात्सी राज्य

20.9 नात्सी दल

20.10 जर्मन आर्य जाति

20.11 शान्ति विरोधी युद्ध समर्थक

20.12 अर्थव्यवस्था का केन्द्रीकरण

20.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

20.0 उद्देश्य

जैसा कि आप जानते हैं इस इकाई के अन्तर्गत हम फासिस्ट राज्य का स्वरूप या प्रकृति को स्पष्ट करने जा रहे हैं । इसके अन्तर्गत हम इटली के फासिस्टवादी राज्य का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करेंगे साथ ही जर्मनी के नात्सी राजा के बारे में भी विवरण देंगे क्योंकि फासिस्टवादी राज्य के संदर्भ में दोनों का विवरण देना जरूरी है तभी एक समग्र चित्र हमारे सामने प्रस्तुत होगा ।

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप जानेंगे :

- मुसोलिनी के नेनृत्व में इटली में फासिस्ट सिद्धान्तों का अर्थ व क्षेत्र

- फासीवाद का दर्शन, फासिस्ट राज्य का स्वरूप, व्यक्ति तथा समाज, अर्थव्यवस्था, फासिस्ट पार्टी तथा संस्थाएं व विचारधारा
- जर्मनी में नात्सीवाद उसका दर्शन, विचारधारा व कार्यक्रम

20.1 प्रस्तावना

सर्वप्रथम यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि फासीवाद एक दर्शन तथा आन्दोकलन है और इसके अन्तर्गत (अ) इटली में फासीवाद [1919 -1943] (ब) जर्मनी में हिटलर द्वारा प्रतिपादित नात्सीवाद [1919 - 1945 नेशनल सोशलिस्ट मूवमेंट) (स) स्पेन में फासीवाद [1936 के आगे] तथा (द) जापानी फासीवाद आन्दोलन [1930 से 1945] का अध्ययन शामिल । इन राष्ट्रों में इस आन्दोलन के नाम अलग थे लेकिन उन्हें एक ही नाम ! एक ही संज्ञा ! फासीवाद कें अन्तर्गत रखा जाता है । इस ईकाई में हम मुसोलिनी के नेतृत्व में इटली में फासिस्ट राज्य के स्वरूप और प्रकृति का विवरण प्रस्तुत करेंगे संक्षेप में, जर्मन नात्सीवाद का वर्णन भी । अंग्रेजी शब्द फासिज्म (फासीवाद) लेटिन शब्द फासियों से बना है जिसका अर्थ है बंडल या लकड़ियों का एक बंधा हुआ ढेर" प्राचीन रोम में फासेस [यह शब्द भी फासियों से निकला है फासेस का अर्थ होता है पतली लकड़ियों (भुर्ज या हिमरोई)ई का एक बंडल जिसके बीच में ऊपर निकला हुआ कुल्हाड़ा होता था यह लकड़ियों का बंडल लाल फीते से बँधा होता था। राजकीय अधिकार का चिध या प्रतीक होना था जिसे एक सेवक लेकर उन अधिकारी सीनेट के सदस्य या सम्राट के आगे चलता था । बेनिटो मुसोलिनी का दल इस फासेस शब्द के आधार पर फासिस्ट दल कहलाया और फासेस को दल के प्रतीक या चिध रूप में स्वीकार किया गया।

20.1.1 फासीवाद (फासिज्म) तथा मुसोलिनी

प्रथम विश्व युद्ध के बाद इटली में फासीवाद कें उदय के कई कारण थे : संसदीय जनतंत्र की अयोग्यता, क्षमता, प्रभावहीन नेतृत्व, निराशाजनक अर्थव्यवस्था, बढ़ती हुई बेकारो की फौज, भुखमरी, व्यापक भ्रष्टाचार और देश में व्याप्त अराजकता । अटली में ऐसी जमीन तैयार हो रही थी कि प्रजातंत्र को दफना कर उसकी कब्र पर एक तानाशाही ढांचा खड़ा किया जा सकें और 1922 में मुसोलिनी के नेतृत्व में फासिस्ट दल नें इटली की राजधानी रोम पर कब्जा कर लिया तथा फासिस्ट राज्य की स्थापना करने में सफलता प्राप्त की । फासिस्ट राजय के स्वरूप, प्रकृति, दर्शन व सिद्धान्तों का विवरण देने से पूर्व इसके संस्थापक और नेता [इटली की भाषा में नेता को डूचे कहा जाता है] के बारें में संक्षिप्त जानकारी जरूरी है।

20.1.2 मुसोलिनी का परिचय

बेनिटों मुसोलिनी (1883-1943) एक लोहार का पुत्र था । उसका पिता एक समाजवादी पत्रकार था तथा माँ स्कूल में अद्यापिका । मुसोलिनी ने भी आरम्भ में एक अद्यापक के रूप में कार्य किया। 19 वर्प की अवस्था में वह स्विट्जरलैण्ड चला गया वहाँ दो वर्ष (1902-1904) तक रहा । कहा जाता है वहाँ उसने मकान बनाने वाले मजदूर के रूप में कार्य किया जर्मन तथा फ्रांसिसी भाषा सीखी, शराब की दुकान में सहायक का कार्य किया । दो वर्ष बाद वह

स्विट्जरलैण्ड से वापस लौटा । मुसाकलनी ने आते ही **इल पोपोलों** नामक पत्र का सम्पादन किया तत्पश्चात् उसने **ला लोटा दी क्लासे** [वर्ग संर्घष] नामक अखबार निकाला अन्ततः **अवान्ति** [आगे] अखवार का सम्पादन बना । इस प्रकार वह समाजवादी आन्दोलन से पूरी तरह जुड़ा तथा आरम्भ में वह प्रथम विश्व युद्ध में इटली द्वारा प्रवेश का विरोधी था लेकिन बाद में उसने युद्ध का समर्थन किया तथा युद्ध में भाग लेकर घायल हुआ । प्रथम विश्व युद्ध के बाद उसने समाजवादी दल से नाता तोड़ लिया और फासिस्ट विचारधारा की वकालत करने लगा । उसके समर्थक काला कुर्ता पहनने थे तथा जरूरत पड़ने पर हिंसा का सहारा लेते, थे । 1922 में उसने अपने काली कुर्ती दल की सहायता से रोम पर अधिकार कर लिया तथा फासिस्ट तानाशाही की स्थापना की ।

20.2 फासिस्ट राज्य का स्वरूप

मार्गेरीटा सरफाती नामक लेखिका ने मुसोलिनी की जीवनी लिखी है । इस जीविनी में उसने लिखा है कि फासीवाद के नेता **(ड्यूचे)** अब भी गर्वोक्ति से कहते हैं कि फासीवाद के पास सैद्धान्ति विचारों का कोई शास्त्रगार नहीं है क्योंकि हरेक व्यवस्था एक गलती है और हरेक सिद्धान्त एक कारागार " । फासीवाद के बारे में यह कहा जाना है कि इसमें सिद्धान्त कम और व्यवहार और क्रियात्मकता जादा है । फासिस्टों की मान्यता थी कि "आज विचारों के लिए नहीं कार्य व कदम उठाने का समय है आगामी पृष्ठों में हम फासीवाद के अन्तर्गत राज्य का स्वरूप, फासिस्ट दल, संस्थाएं, व्यक्ति व समाज, तथा अर्थव्यवस्था के बारे में चर्चा करेंगे । सर्वप्रथम यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि फासीवाद, उदारवाद-विरोधी जनतंत्र-विरोधी, समाजवाद-विरोधी, तथा व्यक्तिवाद का विरोधी है। इसका जन्म प्रथम महायुद्ध के बाद संसदीय जन्तंत्र के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में हुआ । आरम्भ में फासीवाद एक अस्पष्ट विचारधारा थी जो असंगत भावनात्मक अपील, उग्र-राष्ट्रवाद, प्राचीन रोम के गौरव तथा सर्व-रोमनवाद, पर आधारित थी । फासीवाद प्राचीन रोमन सामाज्य की भांति विस्तृत साम्राज्य की स्थापना की बात करता था तथा भूमध्य सागर को इटली की झील के रूप में परिवर्तित करना चाहता था । आरम्भ में फासीवाद में सिद्धान्त से अधिक नारे थे जैसे 'इटली को अपना नवीकरण करना होगा या मौत को गले लगाना होगा " । "मुसोलिन ही फासीवाद है उसके शब्द हमारे लिए पवित्र आदेश है " । "इटली का आन्दोलन सभ्यता का आन्दोलन है " एक प्रमुख नारा था आदेश मानो ! काम करो ! संघर्ष ! त्याग ! लेकिन जब फासिस्ट राजा की स्थापना हो गई तो सिद्धान्तों का निरूपण जरूरी था और सिद्धान्त सामने रखें भी गए लेकिन वे कई स्थानों में विरोधाभास और रहस्यमयता पूर्ण थे । **ड्यूचे** [नेता-मुसोलिनी] नें फासीवाद को दार्शनिक व सैद्धान्ति आधार प्रदान किया तथा राजनीतिक, आर्थिक सामाजिक व्यवस्था का फासीवादी विवेचन किया। मूलतः हम मुसोलिनी के सिद्धान्तों का उसी के लेखों, भाषणों व पत्रों के, माध्यम से व्यक्त करेंगे ताकि फासीवाद का सही और प्रमाणिक चित्र प्रस्तुत किया जा सके।

20.2.1 राष्ट्र राज्य की सर्वोच्चता

फासीवाद सिद्धान्त के अनुसार राज्य का स्थान सर्वप्रथम व सर्वोच्च है, उसके बाद फिर राज्य ही आता है जो कृपा करके व्यक्ति के अस्तित्व स्वीकार करता है क्योंकि इससे राजा प्रसन्न होता है और अन्त में भी राज्य के अलावा कोई चीज महत्वपूर्ण नहीं है ।

संक्षेप में सभी कुछ राजा के भीतर है उससे बाहर कुछ नहीं । राज्य ही आत्मा की आत्मा है । मुसोलिनी के लिए राजा का अर्थ क्या है ? वह स्वयं को ही राज्य मानता है यह सही है कि फांसिसी सम्राट की भांति उसने नही कहा कि 'वह स्वयं राज्य है '। लेकिन उसके समर्थकों व अनुयायियों ने कुछ ऐसा ताना बाना बुना जिससे मुसोलिनी ही जीता जागता राज्य बन गया । **डूचे** ने अपने आपको ईश्वर, इतिहास, राष्ट्र, दल तथा सरकार के रूप में सामने रखा । मुसोलिनी दृढ़ता पूर्वक कहता था' 'न तो व्यक्ति न समूह [राजनीतिक दल, संघ, संगठन, श्रमिक संगठन, वर्ग संगठन] राज्य की परिधि से बाहर है । " इस प्रकार फासिस्ट राजय व्यक्तिविरोधी, समानता विरोधी, जन-विरोधी है। दूसरी और राज्य नैतिक, आध्यात्मिक तथा आचार परक है । फासिस्ट लोग राज्य के लिए 'नैतिक राज्य ' 'आध्यात्मिक शक्ति' जैसे शब्दों का इस्तेमाल करते है । मुसोलिनी ने घोषणा की कि ' 'फासीवाद के लिए कोई भौतिक विश्व नहीं है जैसा कि ऊपरी तौर पर दीख पड़ता है । इस प्रकार राज्य को एक रहस्यमयता का बाना पहनाया गया, एक मिथक [पुराण कथा] की रचना की गई मुसोलिनी के, शब्दों में इस प्रकार हमने अपने मिथक की रचना की है । यह मिथक है श्रद्धा ! यह भावना है ! यह आवश्यक नही है कि यह एक वास्तवकि होगी । यह इस तथ्य के कारण वास्तविकता है कि यह अच्छा है, आशाजनक है, श्रद्धा है यह साहस है । हमारा मिथक, इस महान वैभव, को हम सम्पूर्ण वास्तविकता है कि यह अच्छा है, आशाजनक है, श्रद्धा है यह साहस है । हमारा मिथक है राष्ट्र, हमारा मिथक है राष्ट्र की महानता । इस मिथक, इस महान वैभव को हम संपूर्ण वास्तविकता में परिवर्तित करना चाहते हैं । बाकि सब वस्तुओं को हम नीचे रखते है [अक्टूबर, 1922 में नेपल्स में दिए गये भीषण से अदधृत] ।" इस प्रकार कहा जा सकता है कि राज्य और राष्ट्र [दोनों ही शब्दों का एक दूसरे के समानार्थक कें रूप में प्रयोग किया गया है। निरंकुश है इस सभी कुछ शामिल है, यह सर्वशक्तिमान है, यह सर्वदेशीय व सर्वकालिक है तथा व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक उसका विस्तार है । व्यक्ति का एक ही कर्तव्य है और वह यह कि बिना कोई प्रश्न उठाए राज्य की सेवा में समर्पित हो । राज्य, जिसका प्रतीक **डूचे** (नेता) था, जीवन के सभी क्षेत्रों को नियंत्रित करता तथा अपने दल के लोगों व समर्थकों को पुरस्कार तथा विरोधियों को कठोर सजा देता था ।

20.3 फासिस्ट दल

एक तानाशाही व्यवस्था में एक ही राजनीतिक दल होता है जो जीवन व समाज के सभी क्षेत्रों पर हावी रहता है । मुसोलिनी के नेतृत्व में फासिस्ट दल की यही स्थिती थी फासिस्ट पार्टी **डूचे** (नेता) के विचारों तथा इच्छा का व्यापक व धुआंधार प्रचार करती थी । **डूचे** के आदेश का पालन देवी कानून की भांति किया जाता था और दल के सदस्य नेता के लिए जान पर खेलने

को तैयार रहते थे। फासिस्ट दल के 1800000 वयस्क सदस्य थे जिनमें से 400000 पार्टी सेना [मिलिशिया] के रूप में काम करते थे यह एक स्वयं सेवी सेना थी जिसे सैनिक प्रशिक्षण दिया जाता था । दल के सहायक संगठन के रूप में युवकों व छातों के संगठन थे जो **बालिया, अवानगर्डिस्टी तथा डोप्पोलावोरो** के नाम से जाने जाते थे । 1921 में फासिस्ट दल के संविधान की प्रस्तावना में लिखा गया "फासिस्ट दल राष्ट्र की सेवा में एक स्वयं सेवी मिलिशिया (सेना) है। इसका कार्य व गतिविधियां तीन सिद्धान्तों-व्यवस्था, अनुशान तथा पदानुक्रम (श्रेणी बद्ध)- पर आधारित है। "यह उल्लेखनीय है कि 1932 में फासिस्ट पार्टी के संविधान में परिवर्तन किया गया जिसमें कहा गया : फासिस्ट दल एक नागरिक मिलिशिया (सेना) है जो **डूचे** (नेता) के आदेश पर फासिस्ट राज्य की सेवा करता है (यह ध्यान देने योग्य बात है कि पहले यह मिलिशिया राष्ट्र की सेवा में था अब डूचे के आदेश पर काम करता है) फासिस्ट दल के गठन तथा कार्य प्रणाली पर गौर केर तो लगता है कि मानों फासिस्ट दल एक मिलिशिया, एक सार्वजनिक संस्था, एक चर्च, एक राज्य, एक राष्ट्र या शायद इन सबको मिला देनें के बाद भी उससे कुछ अधिक ही था। फासीवाद के प्रसिद्ध लेखक जेन्टाइल के अनुसार "फासिस्ट दल राष्ट्र है"। अक्टूबर 1934 में फासिस्ट दल के साथ सम्बन्ध विभिन्न संगठनों की सदस्य संख्या इस प्रकार थी।

संगठन का नाम	**सदस्य संख्या**
विश्वविद्यालय फासिस्ट समूह	66934
युवक फासिस्ट (आयु 18-21)	657613
स्त्री फासिस्ट संगठन	304313
फासिस्ट लड़किया	83053
स्कूल में फासिस्ट संगठन	
प्राथमिक स्कूल	100581
माध्यमिक स्कूल	24035
विश्वविद्यालय प्रोफेसर	2568
विश्वविद्यालय अन्य समूह	2099
कला व पुस्तकालय संगठन	1315
फासिस्ट संध	
सरकारी कर्मचारी	230,760
रेलवें कर्मचारी	125386
डाकतार टेलीफोन कर्मचारी	74,859
सरकारी उद्योग	70,890
सेवा निवृत अधिकारी	151,491
डोप्पोलावोरो	21.08.227
जल सेना संघ	41,827
ओलम्पिक संघ	612559 (वर्ष 1933)

दल के सदस्यों को **डूचे** के प्रति निष्ठा थी शपथ लेनी पड़ती थी जिसका प्रारूप इस प्रकार है :

"ईश्वर तथा इटली को साक्षी करनें में शपथ लेता हूं कि मैं **डूचे** कें आदेश का पालन करूंगा तथा समस्त शक्ति के साथ फासिस्ट क्रान्ति की सेवा करूँगा चाहे उसके लिए अपना रक्त भी क्यों न बहाना पड़े " । इस प्रकार फासिस्ट दल के रूप में व्यापक तंत्र ! एक मशीनरी का गठन किया गया जो युद्ध तथा शांति दोनों ही स्थितियों में नेता की सेवा तथा तानाशाही के प्रति समर्पित थी । पार्टी का सदस्यता कार्ड सफलता की कुंजी बन गया।

20.3.1 फासिस्ट दल का संगठन

मुसोलिन कें अपने दल के संदर्भ में कहा कि : ' सर्वसत्ताधिकार-वादी राज्य में फासिस्ट दल का चरित्र, गुण तथा कार्य प्रणाली सर्वथा भिन्न है " । यह न दल था न मिलिशिया, न सार्वजनिक संस्था था न चर्च, न राजा, न राष्ट्र फिर यह दल क्या था? यह एक अल्पतंत्र ! एक गुटतंत्र ! था जिसमें मुट्ठी पर लोग समस्त इटली पर एकाधिकार जमाए बैठे थे । पार्टी का संगठन इस प्रकार था:

डूचे : फासिस्ट दल में सर्वोच्च शिखर पर **डूचे** (नेता) होकता था उसी के आदेश पर सभी कार्य होते थे वह सर्वशक्तिमान था और दल के दूसरे पदाधिकारी उसकी कृपा पर ही जीवित थे वे तभी तक अपने पद पर बने रह सकते थे जब तक डूचे का आशीर्वाद उन्हें प्राप्त हो।

फासिस्ट दल का सचिव : दल के केन्द्र रोम सें लेकर स्थानीय संगठन तक दो मिली जुली रेखाएं चलती थी (1) नेता जिन्हें **गेरार्ची** कहा जाता था दूसरे समितियाँ जिन्हें **आरेगानी कोलेगियाल्यी** कहा जाना था । इन दोनों संगठनों के ऊपर राष्ट्रीय सतर पर दल का सचिव होता था । **डूचे** की सिफारिश पर अटली का राजा दल के सचिव की नियुक्ति करता था **डूचे** के कहने पर उसे हटाया जा सकता है । यह सचिव महा परिषद (ग्राण्ड काउन्सिल) का पदेन सदस्य होता था । वह मंत्रिमण्डल की बैठक में हिस्सा ले सकता था तथा प्रतिरक्षा सर्वोच्च परिषद, शिक्षा उच्च परिषद, राष्ट्रीय फासिस्ट संस्कृति संस्थान की प्रशासन परिषद तथा निगमों की राष्ट्रीय परिषद का सदस्य होता था। फासिस्ट दल का सचिव सेवानिवृत अधिकारियों की राष्ट्रीय परिषद का अध्यक्ष, राष्ट्रीय ब्यूरों के प्रशासनिक आयोग का अध्यक्ष, होने के साथ ही श्रमिक संगठनों, विश्वविद्यालय संबंधी केन्द्रीय समिति का उपाध्यक्ष होने कें साथ ही साथ युवा फासिस्ट लड़ाकू दल का सेनापति होता था इस प्रकार **डूचे** के बाद फासिस्ट दल का सचिव ही सबसे प्रमुख अधिकारी होता था।

दल का संचालक मण्डल : दल का सचिव संचालक मण्डल का अध्यक्ष होना था इस मण्डल में दो उप सचिव, एक प्रशासनिक सचिव तथा छ : सदस्य होते थे प्रतिमाह इसकी बैठक होती थी । छ : सदस्यों का कार्यकाल एक वर्ष का होता था।

प्रान्तीय स्तर पर संगठन : फासिस्ट दल का केन्द्रीय मुख्यालय प्रान्त में सचिवों तथा संचालक मण्डल की नियुक्ति करता था।

स्थानीय स्तर पर संगठन : स्थानीय सतर पर स्थानीय **फासी** (दल) का निर्माण किया जाता । दल कें संविधान की दूसरी धारा में कहा गया है दल का गठन सदस्यों द्वारा होता है जो **फासी पडी कोम्बेटीमेन्टों** (यौद्धा समूह) कहलाते है ये स्थानीय स्तर, प्रांतीय स्तर तथा राष्ट्रीय स्तर पर गठित होते है।

दल का मिलिशि : बहुत सावधानी पूर्वक और पूरी जाँच के बाद दल के सदस्यो को मिलिशिया में भर्ती किया जाता है 20 वर्ष की उम्र में युवा फासिस्टों को चुनाव करते समय उनकी जुझारू प्रकृति व राजनीतिक निष्ठा की जाँच की जाती है।

20.3.2 फासीवाद की महासभा

फासीवाद की महासभा (ग्रांड काउन्सिल) देश की सर्वोच्च संस्था है इसके कार्य दो प्रकार के है (1) फासिस्ट दल से सम्बन्धित तथा (II) फासिस्ट राज्य से सम्बद्ध फासिस्ट दल से संबंधित कार्य इस प्रकार है :

प्रतिनिधि सभा के सदस्यों के चुनाव के लिए सूची तैयार करना उसमें नाम जोड़ना या हटाना।

संविधान की व्याख्या तथा फासिस्ट दल के राजनीतिक उद्देश्यों पर विचार करना ।

फासिस्ट दल के सचिव, उप सचिव, प्रशासनिक सचिव तथा अन्य प्रतिनिधियों की नामजदगी तथा उन्हें हटाना महासभा के राज्य से संबंधित कार्य हैं :

- संविधान से संबंधित मामलों में इसकी सलाह (सलाह शब्द पर ध्यान दें-सलाह की जा सकती है, दी जाएगी लेकिन उस पर अमल होगा या नही यह स्पष्ट नहीं है ली जानी चाहिए । वैसे संविधान के अन्तर्गत वे सभी कुछ आ जाता है।
- यह प्रधान मंत्री को मनोनीत करती है । लेकिन वास्तव में सभी कार्य **डूचे** की इच्छा से होते हैं । संसद के दोनों सदन प्रतिनिधि सी व सीनेट के सदस्य के रूप में चुनाव भी **डूचे** की इच्छा पर निर्भर करता था ।

20.4 व्यक्ति और समाज

फासिस्ट राज्य के अन्तर्गत व्यक्ति के लिए एक ही नारा था : आदेश मानो ! काम करो ! संघर्ष करो ! त्याग करो ! व्यक्ति एक अनुशासित सैनिक की भांति राज्य के कल्याण के लिए संघर्ष करेगा इस संबंध में कोई प्रश्न नही करेगा, आदेश मानेगा, काम करेगा व त्याग करेगा । मुसोलिनी ने इतिहास का उपयोग मानवीय भावना की मुक्ति के लिए नही वरन् उसे कारागार बनाने के लिए किया। फासीवाद ' 'अधिकतम व्यक्तियों को अधिकतम सुख व खुशी '' के सिद्धान्त को नही मानता था और व्यक्तिवाद का घोर शत्रु था । हो सगछ करता है कहना था कि ' 'फासिस्ट राजा का सिद्धान्त व्यक्तिवपाद विरोधी है राज्य में व्यक्ति का उतना ही स्थान है जितना कि राज्य के हित में है । राजा विश्वजनीन आत्मा है । मानव के ऐतिहासिक अस्तित्त्व में राज्य की इच्छा ही प्रमुख है । फासिस्टवादी सिद्धान्तवाद उदारवाद का विरोधी है-फासीवाद पुन. घोषणा करता है कि राज्य ही व्यक्ति की सच्ची वास्तविकता है । व्यक्ति सिर्फ एक मानवी-मशीन था जो फासिस्ट तक व फासिस्ट दल के लिए समर्पित था इस तंत्र में

कर्तव्यों पर अधिक जोर दिया जाता है । एक अवसर पर मुसोलिनी ने कहा, ' 'फासीवाद ने इटली वासियों को एक प्रमुख बात कही है वह यह कि कर्तव्य पूरा करने के पहले अधिकार नही है । " मुसोलिनी की मान्यता थी 'यदि कोई इतिहास परक तथ्य है तो वह यह कि मनुष्य की सभ्यता का समस्त इतिहास-गुफामानव से सभ्य तथा कथित सभ्य मानव तक-स्वतंत्रता को निरंतर सीमित करना है । " फासीवाद भौतिकवाद, व्यक्तिवाद तथा आनन्द का विरोध करता है । समाजवाद की खिल्ली उड़ाने हुए मुसोलिनी कहता है : "समाजवाद मनुष्यों' को न्यूनतम सुविधाओं की गारन्टी देता है वे सुविधाएं है : शराब, सिनेमा, औरत और मुर्ग मुसल्लम लेकिन वास्तविक दुनिया में खुशी का कोई अस्तित्व नहीं है " फासीवाद सुविधाजनक जीवन का विरोध करता है । इस सबके बावजूद यह कहना होगा कि फासिस्ट राज्य ने व्यक्ति को अपने सीमित साधनों को देखते हुए सुविधाएं देने का प्रयास किया लेकिन बढ़ती कीमतों और राज्य के बढ़ते हुए खर्चो के कारण जनता का जीवन स्तर अधिक उन्नत न था यद्यपि सरकारी आंकड़ों में राज्य की उपलब्धियों की काफी चर्चा रही ।

20.5 आर्थिक व्यवस्था व निगम

यह याद रखने योग्य बात है कि मुसोलिनी ने अपना राजनीतिक जीवन एक समाजवादी आन्दोलनकारी व पत्रकार के रूप में आरम्भ किया था और समाजवाद की राह से गुजरता हुआ वह उग्र राष्ट्रवाद व तानाशाही के मार्ग पर बढ़ा । अर्थव्यवस्था संबंधी मुसोलिनी के विचारों और कदमों का अध्ययन किया जाए तो पता चलेगा कि समाजवाद की एक शाखा श्रमिक संघवाद या श्रेणीवाद (सिंडिकल्जिय) की और उसका झुकाव था लेकिन वह राष्ट्रीय श्रमिक संघवाद का समर्थक प्रतीत होता है । साथ ही उसके राप्ट्रीय श्रमिक संघवाद में पूंजीवाद में औद्योगिक संस्थानों, वित्तीय हितों व जमींदारों के आर्थिक हितों का प्रतिनिधित्व भी दीख पड़ता है । मजदूरों की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति भी मुसोलिनी की अर्थव्यवस्था का अंग थी । इस अर्थव्यवस्था का चर्मोत्कर्ष हम निगमों (कोपोरिशन) संबंधी नीति में पाने है । यद्यपि 1934 तक निगमों के निर्माण व कार्य के बारे में कोई कानून नहीं बना लेकिन इस दिशा विचार तथा कार्य के क्षेत्र में बारह वर्ष पहले ही विचार आरम्भ हो गया था । 1922 में फासिस्ट कांग्रेस में निगम की स्थापना का विचार सामने आया तथा मजदूरों के संघ, श्रेणी या निगम स्थापित करने तथा अर्थव्यवस्था में उनकी भूमिका की न केवल चर्चा हुई वरन मजदूरों के संघ (सिन्डीकेट) की स्थापना की बात हुई ।1923 में 850,000 मजदूर इन संघों या श्रेणीयों के सदस्य बने । निगमों के निमार्ण व उसे सुचारू रूप से चलाने के लिए श्रमिकों व मालिक (पूँजीपतियों) के हितों का समन्वय व समायोजन जरूरी था । इस प्रकार वर्ग संघर्ष को समाप्त किया जा सकता था ।

20.5.1 पूर्ण केन्द्रीकृत अर्थव्यवस्था

फासिस्ट राज्य सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी और पूर्ण अधिकार सम्पन्न राज्य था अत: यह स्वाभाविक ही था कि राट्रीय अर्थव्यवस्था पर उसका सम्पूर्ण स्वामित्व हो । अर्थतंत्र को सुचारू रूप से चलाने के लिए निगम व्यवस्था का निर्माण किया गया जिसमें मजदूर श्रेणीयों (संघों)

तथा उद्योगपतियों के दायित्वों का समन्वय किया गया। 1925 में श्रमिक संघों के प्रतिनिधियो तथा उद्योगपतियों की एक बैठक बुलाई गई जिसमें उद्योगपतियों ने श्रमिकों के संघों को मजदूर का द्रुर्ग प्रतिनिधि माना और श्रमिक संघों ने उद्योगपतियों के संघ को उद्योग का पूर्ण प्रतिनिधी स्वीकार किया । 1 अक्टूबर 1925 में फासिस्ट महासभा (ग्रांड काउन्सिल) ने यह तय किया कि न कोई हड़ताल होगी (मजदूरों की ओर से) न कोई तालाबन्दी (उद्योगपतियों की ओर से) यदि दोनों पक्षो मजदूर व उद्योगपतियों के बीच कोई विवाद होगा तो श्रम-न्यायधीश फैसला देगें । इस प्रकार फासिस्ट राज्य ने निगम व्यवस्था के माध्यम से आर्थिक तथा जीवन के अन्य पहलुओं को नियमित करने का दावा किया ।

20.5.2 निगम

मुसोलिनी ने 10 नवम्बर 1936 को निगम व्यवस्था के संबंध में घोषणा थी कि "आज निगम व्यवस्था के रूप में एक महान मशनी कार्य आरम्भ करेगी ।यह उल्लेखनीय है कि यह निगम व्यवस्था प्रसिद्ध ब्रिटिश समाजवादी विपचारक जी. डी. एच. कोल के गिल्ड सोशलिज्म या संघवाद (श्रेणीवाद) से कुछ मिलती जुलती थी। **ड्रूचे** ने यह भी कहा कि "निगम अपने आप में कोई लक्ष्य न होकर एक लक्ष्य की पूर्ति का साधन हैं "। एक अन्य अवसर पर **ड्रूचे** ने घोषणा की कि "नियमों की स्थापना पूंजी निर्माण, राजनीतिक शक्ति, तथा इटली की जनता के, कल्याण के लिए की गई है । निगमवाद का अर्थ है अनुशासित व्यवस्था-क्योंकि जो नियंत्रित नही है वह अनुशासन नही है । निगमवाद समाजवाद तथा उदारवाद का मुकाबला करता है यह एक नवीन समन्वय को जन्म देना है " निगमित राज्य ! पूंजीवाद का विरोधी नहीं था मुसोलिनी पूँजीवाद का विरोध करना भी नही चाहता था । क्योंकि उन्ही की मदद से वह सत्ता में आया अत : उसने उत्पादन के क्षेत्र में निजी उद्योगों व उपक्रम का विरोध नही किया । हाँ पूंजीवाद को नियंत्रित जरूर किया 1922 में जब फासिस्ट दल ने सत्ता का अधिग्रहण किया तो देश की आर्थिक स्थिति डाँवाडोल थी । जनता को आवश्यक सुविधाएं देने के लिए औद्योगिक शान्ति जरूरी थी । इटली एक गरीब देश था अत : श्रमिक विवादों की समाप्ति तथा मजदूर और उद्योगपतियों के बीच सहयोग व शांति आवश्यक थी । एक ओर आन्तरिक प्रगति और समृद्धि की जरूरत थी दूसरी ओर आक्रमक विदेशी नीति का अनुसरण करनें के लिए नए क्षेत्रों को जीतने के लिए औद्योगिक उत्पादन जरूरी था । आर्थिक उत्पादन ही सर्वोच्च लक्ष था । सरकार ने कुल 22 निगम बनाए जिनके अन्तर्गत निम्नांकित विपय आते थे-अनाज, फल, सब्जी व फूल, अंगूर व शराब, शक्कर, खाद्य तेल, पशुपालन मतस्य पालन, पवन तथा जंगल, सूती वस्त्र उद्योग व इन्जीनियरिंग, रसायनिक उद्योग, वस्त्र, कागज व छपाई, भवन निर्माण, पानी गैस व विजली, खान व खनन-काय, शीशा व चीनी के बर्तन, कर्ज व बीमा, कला व व्यवस्था, वायु व समुद्री उद्योग, आंतरिक परिवर्तन/संचार, जन-मनोरंजन व जन-आथित्य से संबंधित थे । प्रत्येक निगम को इतना विशाल बनाया गया कि वह उससे सम्बद्ध सब व्यावसायिक हितों का प्रतिनिधित्व कर सकता था उदाहरण रसायन उद्योग के 65 प्रतिनिधि

होने थे, तथा चुकन्दर व शक्कर के 12 प्रतिनिधित । सभी उद्योगों के कुल मिलाकर 800 प्रतिनिधि थे । जिनमें उद्योगपति व मजदूर शामिल थे।

20.5.3 श्रमिक न्यायलय

क्योंकि अब न मजदूर हड़ताल कर सकते थे न मालिक तालाबन्दी, लेकिन किसी न किसी प्रश्न को लेकर औद्योगिक विवाद हो ही सकता था अत : उसके निपटारे के लिए श्रम-न्यायालयों की स्थापना की गठ ऐसे श्रमिक न्यायालयों की स्थापना कोई फासिस्ट राज्य की नई देन नहीं थी, ऐसे न्यायालय आस्ट्रेलिया व न्यूजीलेण्ड में तो उस समय मौजूद थे जब मुसोलिनी जन्मा था । श्रम-न्यायालय के न्यायाधीश 'भी फैसले करने को स्वतंत्र नहीं थे क्योंकि वे प्रजातंत्र में नही, एक तानाशाही में सांस ले रहे थे जहाँ पर फैसला फासिस्ट लोग करते थे महत्वपूर्ण फैसले प्रान्ततीय व राष्ट्रीय फासिस्ट दल के नेता करते थे अत्यधिक महत्वपूर्ण फैसला में **डूचे** (नेता) की स्वीकृति जरूरी थी । न्याय के प्रहरी न्यायाधीश वही भाषा बोलते और लिखने थे जो फासीवाद के विचारधारा के अनुकूल थी और **डूचे** को सुहाती थी।

20.5.4 आर्थिक संसद

यहां यह उल्लेखनीय है कि फासिस्ट नेता (डूचे) संसदीय जनतंत्र का जानी दुश्मन था । संसदीय जनतंत्र का प्रतीक होती है संसद । संसद को फासिस्ट लोग 'बकवास की दुकान कहते थे । सभी के लिए मतदान (वोट) के अधिकार को कब्र से दफनाने की दिशा में धीरे-धीरे कदम उठाये गए लेकिन 1922 में सत्ता प्राप्त करने के बाद मुसोलिनी ने जनतांत्रिक संसद को भंग नहीं किया उसे बर्दाश्त किया । लेकिन वह सभी बालिग लोगों के मताधिकार पर आधारित संसद का विरोधी था इसलिए उसने सम्पूर्ण बालिक मताधिकार के आधार पर निर्वाचित संसद के स्थान पर एक आर्थिक संसद का न केवल विचार सामने रखा वरन् उसे कार्यान्वित भी किया । यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि मुसोलिनी यानी नेता यानी **डूचे** संसद का समाप्त करना चाहता । संसद को समाप्त करने का एक अच्छा तरीका यह था कि संसद जिंदा रहे मौजूद रहे (लेकिन उसे कमजोर अच्छा और प्रभावहीन बना दिया जाए) ताकि जनता को लगे कि जनतंत्र कायम है वैसे सर्वसत्ताधिकारवादी राज्य (तानाशाही) और संसदीय जनतंत्र का कोई आपसी रिश्ता नहीं होता।

20.6 शांति विरोधी युद्ध समर्थक

विदेशी नीति के क्षेत्र में मुसोलिनी ने साहसिक विस्तारवाद और उपनिवेशवाद की नीति अपनाईं अटली एक साधन सम्मन देश नही था । देश में प्राकृतिक साधन कम उपलब्ध थे और जनसंख्या में भारी बढोतरी हो रही थी । बढ़ती जनसंख्या के लिए उपनिवेशों की प्राप्ति आवश्यक थी । यूरोप में विस्तार की कोई गुंजाइश नहीं थी अत : अफ्रीका में उपनिवेश बसाना जरूरी था।

फासिस्टों का कहना था ' 'इटली एक ऐसा राजा जिसके पास जनसंख्या अधिक है और भूमि कम, अफ्रीका में भूमि अधिक है और जनसंख्या कम '1935 में फासिस्ट अखबारों ने

लिखा कि "इटली को अबीसीनिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करनी चाहिए क्योंकि इटली का उद्देश्य सभ्यता का उद्देश्य है " उसी वर्ष इटली ने अबीसिनिया को जीत कर अपने उपनिवेश में परिवर्तित कर लिया।

मुसोलिनी शांति का कट्टर विरोधी और युद्ध तथा साम्राज्यवाद का सशक्त समर्थक था । वह कहा करता था ' 'खतरनाक ढंग से जिओ," खतरों से खेलना ही जिन्दगी है । डेचे की मान्यता थी कि ' साम्राज्यवाद जीवन का अपरिवर्तनीय ओर बाह्य सिद्धान्त है । शांति का विरोध करते हुए उसने यह विचार व्यक्त किए ' 'फासीवाद की सर्वोपरि मान्यता है कि शाश्वत शांति न सम्भव है न उपयोगी " । शांति को वह कायरता मानता था मनुष्य के सामने दो ही मार्ग है जीवन या मृत्यु । फासिस्ट विचारों के अनुसार ' 'सिर्फ युद्ध ही मानव ऊर्जा को चरम उत्कर्ष तक ले जाता हैं तथा जो लोग युद्ध का सामना करने का साहस दिखाते है उन पर अभिजात्य की छाप लगती है । दूसरी सारी परीक्षाएं मामूली है "। मई ।1934 में इटली की प्रतिनिधि सभा के समक्ष बोलते हुए मुसोलिनी ने घोषणा की : इतिहास बनाता है कि युद्ध ही वह तथ्य हैं जो मानवता के विकास के साथ चलता है संभवत : यह मानव की दुखद त्रासदी है। मनुष्य के लिए युद्ध उतना ही स्वाभाविक जैसे कि स्त्री के मातृत्व शक्ति व भावना । शाश्वत शांति में यकीन नही करता "1934 में ही एक अन्य अवसर पर **डूचे** नें विचार प्रकट किया कि ' 'हम सैनिक राष्ट्र बना रहे और हम हमेशा इसी राह पर बढ़ेंगे क्योंकि हम शब्दों के उपयोग से नहीं डरते हम कहना चाहेगें हम सैन्यवादी है इसी बात को आगे बढ़ा कर कहेंगे कि युद्ध-प्रिय है और हम पितृ भूमि (मातृभूमि) के प्रति आज्ञाकारिता आत्मत्याग व निष्ठा को बढ़ावा देते हैं "

20.7 नात्सीवाद

हिटलर के नेनृत्व में नेशनल सोशलिस्ट वर्क्स पार्टी (संक्षेप में नात्सी पार्टी) ने 1933 में जर्मनी में सत्ता प्राप्त की । वह नात्सीवाद भी फासिस्टवादी दर्शन के अन्तर्गत आता है तथा नात्सीवाद व फासिस्टवादी में अत्यधिक समानता है दोनों विचारधाराएं व्यक्तिवाद, जनतंत्र उदारवाद, साम्यवाद, सामयावादी अन्तर्राष्ट्रीय वाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में सामने आई । दोनों तर्क विरोधी और उग्र राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत हैं साथ ही साम्राज्यवादी एवं युद्धोन्मादी विचार धाराएं है । अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में वे राजा के वर्चस्व एवं केन्द्रीकरण की पक्षपाती है । साम्यवादी साहित्य व लेखों में जब सामान्यतया फासिस्टवाद शब्द का इस्तेमाल होता है तो ज्यादातर नात्सीवाद की जोर संकेत होता है ।

20.8 नात्सी राज्य

नात्सीवाद राज्य तथा राष्ट्र की अवधारणा पर अत्यधिक बल देता है । राज्य सवाल है, सर्वोपरि है सर्वशक्ति सम्पन्न है । हिटलर ने अपनी पुस्तक **माईन काम्फ** (मेरा संघर्ष) में राज्य के बारे में लगभग 22 पृष्ठ लिखे हैं उनके अद्ययन से उसके राज्य विषयक जो विचार सम्मुख आते है वे इस प्रकार है "आर्यो के रूप में हम राजा को जनता का एक जीवंत संगठन की भांति मानते हैं। " नात्सीवाद राज्य को एक सर्वोच्च मानव इकाई कें रूप में मानता है । इसका अर्थ यह हुआ कि राज्य के सम्मुख व्यक्ति कुछ नही है राज्य ही सर्वोपरि है । हिटलर ने लिखा : अपने

संगठन में राज्य को व्यक्तित्व के सिद्धान्त के रूप में प्रतिष्ठापित किया जाना चाहिए जो एक छोटे से जीवाणु से आरम्भ होकर देश की सर्वोच्च सरकार तक बढ़ता है-नगर पालिका से आरम्भ होकर राइश (साम्राज्य) की सरकार तक जाता है " राज्य जिस सामग्री से बनता है वह है जन या जनता जिसे जर्मन भाषा में **फोल्क** कहते हैं जनता का सबसे बड़ा कर्तव्य है राज्य के प्रति । व्यक्तिगत स्वतंत्रता एक गौण विषय है बहुत ही कम महत्व की वस्तु ।

20.9 नात्सीदल

जर्मन नेता (फ्यूहरर) हिटलर, नात्सीदल का सर्वोच्य नेता था । 1933 में सत्ता में आने के बाद अपने दूसरे सभी राजनीतिक दलों पर प्रतिबंध लगा दिया और देश में एकमात्र राजनीतिक दल रह गया वह था नात्सी दल । यह दल जर्मन राज्य का सर्वाधिक प्रभावशाली संयंत्र था। राज्य का यह दायित्व था कि वह सनात्सी दल के कार्यक्रम व घोषणाओ को उचित आदर व सम्मान दें। नात्सीदल अपने सदस्यों से अंध भक्ति की अपेक्षा करता था **फ्यूहरर** हमेशा सही था और दल के सदस्यों का यह पवित्र कर्तव्य था कि वह नेता के आदेश का पालन करें । दल के सदस्यों के लिए एक ही नारा था संघर्ष ! श्रद्धा ! श्रम ! और त्याग ! मुसोलिनी का फासिस्ट दल भी तो यही चाहता था यही मांग कर रहा था ।

20.10 जर्मन आर्य जाति

नात्सीवाद की एक प्रमुख विशेता है उसकी जातिवादी या प्रजातिवादी विचारधारा (रसियल ध्योरी) हिटलर की मान्यता थी कि जर्मन लोग आर्य जाति के है और सबसे अधिक शुद्ध आर्य रक्त जर्मन जनता की नसों में दौड़ता है । पयूहरर (नेता) जर्मन जाति को उच्च श्रेणी का मानता था तथा उसनें घोषित किया कि जर्मन-आर्य-जाति दुनिया पर शासन करने के लिए उत्पन्न हुई है । हिटलर ने अपनी पुस्तक **माईन काम्फ** (मेरा संघर्ष) में लिखा है । इस पृथ्वी पर मानव सभ्यता एवं संस्कृति का विकास आर्यो के अस्तित्व के कारण ही हुआ है यदि आर्यों का विनाश होता है या उन्हें पराधीन होना पड़ता हैं तो बर्बर जातियॉ धरती पर छा जाएंगी । हिटलर यह भी मानता था कि प्रतिभा शासक जाति आर्य की ही सम्पत्ति है अन्य लोग बर्बर, अर्ध सभ्य, अर्ध मानव व जंगली है। आर्य ही मानव सभ्यता की प्रगति का प्रतीक है । हीन जातियों के साथ रक्त संबंध होने से जर्मन जाति का कुछ पतन हुआ हैं यहाँ यह उल्लेखनीय है मुसोलिनी शुद्ध रक्त व आर्य जाति की चर्चा नहीं करता था न अपने आपको आर्य मानता था । फासिस्टवाद व नात्सीवाद यह एक प्रमुख भेद है।

20.11 शांति विरोधी युद्ध समर्थक

हिटलर शक्ति एवं साम्राज्यवाद का पुजारी था तथा शान्ति का धोर विरोधी। वह खुले आम कहता था हम बर्बर है, बर्बर होना सम्मानजनक है (यहाँ बर्बर का अर्थ शक्ति या शक्तिमान होनें के अर्थ में है) हम दुनिया का कायाकल्प करेंगे यह दुनिया (वर्तमान विश्व) तो समाप्त होने को है इसका अंत करीब है । यह स्पष्ट है कि हिटलर चंगेज खान का प्रशंसक है वह स्टालिन को एक ही अर्थ में पसंद करता था और वह यह कि स्टालिन को वह चंगेज खां का नवीन संकरण मानता था । हिटलर युद्धोंन्मादी था, युद्ध प्रिय था बीसवीं सदी में उससें बड़ा युद्ध किसी ने भी नही छेड़ा **फ्यूहरर** की मान्यता थी कि जहाँ तक संस्कृति का संबंध है उसे उस समय व

आधा की प्रतीक्षा करनी चाहिए जब नक विश्व में एक बर्बर विरोचित युग की स्थापना नहीं हो जाती । हिटलर की साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद की पिपासा के कारण द्वितीय महायुद्ध युद्ध हुआ।

20.12 अर्थव्यवस्था केन्द्रीकरण

मुसोलिनी की भांति हिटलर भी अर्थव्यवस्था पर राज्य का पूर्ण नियंत्रण चाहता था लेकिन जहाँ मुसोलिनी ने निगमवाद या श्रमिक संघवाद की नीति अपनाई हिटलर ने यह नीति नहीं अपनाई। नात्सी जर्मनी में पूँजीपतियों को विस्तार का अवसर दिया गया लेकिन राज्य के नियंत्रण में साथ ही पूर्ण रोजगार की प्राप्ति के लिए नए सड़क मार्ग (ऑटो वाहन) तथा भवनों के निर्माण का एक विशाल कार्यक्रम सरकार ने अपने हाथों में लिया तथा मजदूरों के जीवन स्तर में सुधार की ओर'भी ध्यान दिया।

यहाँ यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि इस ईकाई में फासिस्टवाद पर विस्तार से लिखा गया है और नात्सीवाद पर बहुत संक्षेप में । दोनों ही विचार धाराओं में भारी समानता है। नात्सीवाद में जातीय शुद्धता (आर्यजाति) यहुदियों का विरोध जैसे तत्व हैं जो फासिस्टवाद में कम ही नजर आते हैं इसके अतिरिक्त आर्थिक क्षेत्र में फासिस्टवाद में निगम व्यवस्था व श्रमिक संघवाद दृष्टिगत होता है यह विशेषता नात्सीवाद में नजर नहीं आती। अन्य सभी मामलों में फासिस्टवाद एवं नात्सीवाद में समानता है यही कारण है कि दोनों श्याब्दों को खोजकर फासिस्टवाद को नात्सीवाद क समानार्थक ही माना जाना है ।

20.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. यूरोप इन दी नाईन्टीथ एण्ड ट्वन्टीथ सेंचुरीज लिप्सन
2. लुइगी विराली-दि अवेकनिंग इटली
3. डेनिस मेकस्मिथ-इटली इन मोर्डन हिस्ट्री
4. मथुरा लाल शर्मा-अंतर्राष्ट्रीय संबंध
5. पुखराज जैन-अन्तर्राष्ट्रीय संवंध
6. हाकिंस-यूरोपियन इम्पिरियलिज्म इन अफ्रीका
7. एन. एच. जोन्सटन-दी ओपनिंग अप टू अफ्रीका
8. केल्टी-दी पार्टीशन्स आफ अफ्रीका
9. एलैक्जैन्डर एफ-फोम पेरिस द लोकानॉ
10. कार-इन्टरनेशनल रिलेश्यान्स बिटविन दी टू वर्ल्ड वार

MAHI-03/ISBN13/978-81-8496-262-8